गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन

खोज गाँधी की

गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन, जलगाँव की त्रैमासिक पत्रिका वर्ष-३ □ अंक-१ □ जनवरी - मार्च, २०१४

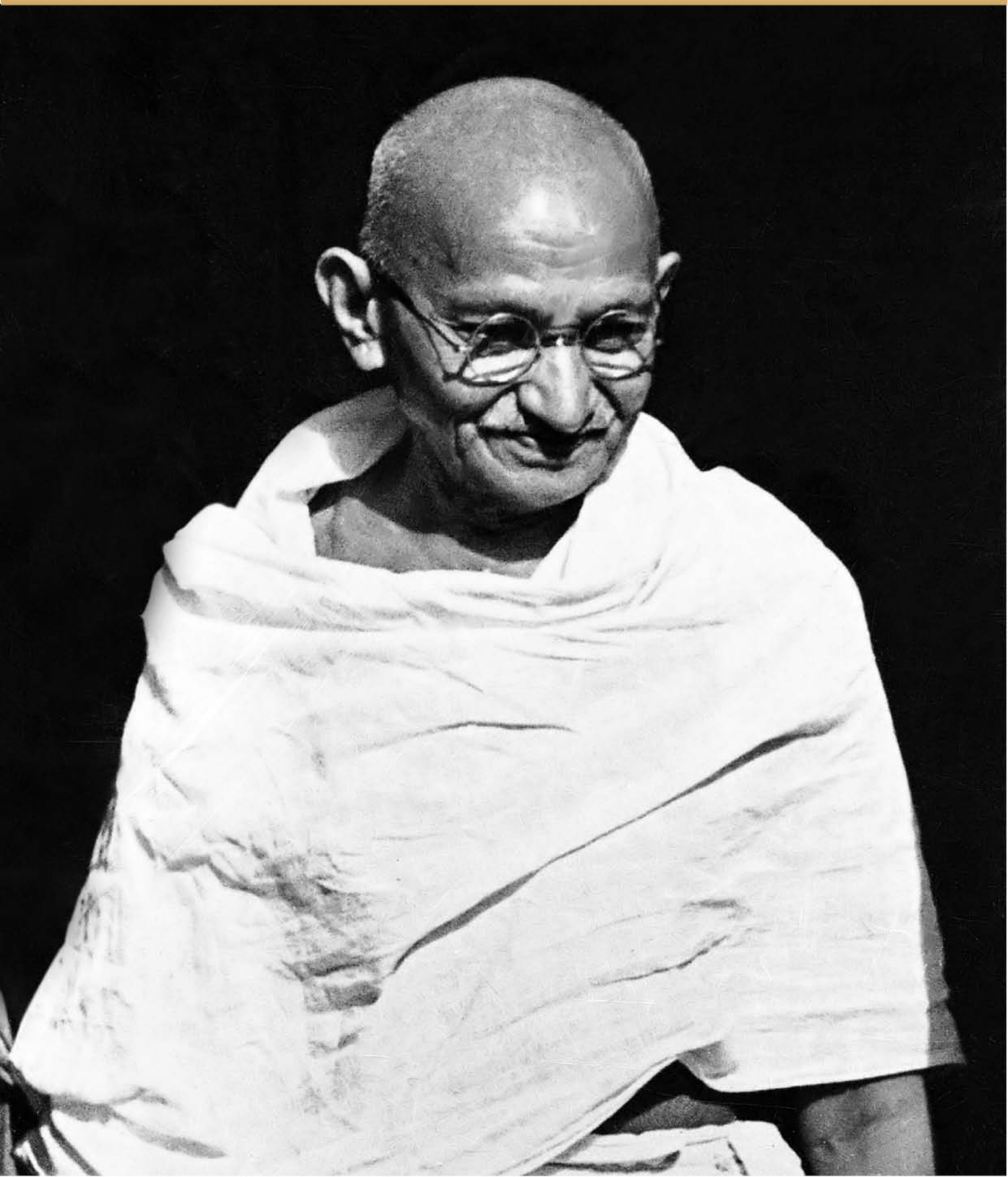

गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन, जलगाँव द्वारा प्रकाशित –

खोज गाँधी की

सत्य व अहिंसापरक विचारों को समर्पित
वर्ष-3 □ अंक-1 □ जनवरी-मार्च, 2014

चरित्र की संपत्ति दुनियाँ की तमाम दौलतों से बढ़कर है।

– महात्मा गाँधी

इस अंक में– ..... **पृष्ठ**

सम्पादकीय..... १

राष्ट्रपिता का अप्रिय पितृत्व..... २
न्या. चन्द्रशेखर धर्माधिकारी

मुझे बापू कहलाना ही अच्छा लगता हैं..... ४
मनु शर्मा

पिताजी की मृत्यु और मेरी दोहरी शरम..... ६
मोहनदास करमचंद गाँधी

आज की समाज रचना..... ७
डॉ. भवरलाल जैन

'बा' का अवसान..... ९
मनुबहन गाँधी

फाउण्डेशन की गतिविधियाँ..... ११-१६

मार्गदर्शक
न्या. चन्द्रशेखर धर्माधिकारी, डॉ. भवरलाल जैन

प्रबन्ध सम्पादक
अशोक जैन

सम्पादक
डॉ. श्रीप्रकाश पाण्डेय

कला एवं अक्षर-सज्जा
भूषण मोहरीर

सम्पादकीय कार्यालय
गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन,
गाँधी तीर्थ, जैन हिल्स, पोस्ट बॉक्स संख्या 118,
जलगाँव – 425 001.
दूरभाष : 0257-2260011/22, 2260381, मो.: 9404955352
फैक्स : 0257-2261133
वेब : www.gandhifoundation.net
इ-मेल : info@gandhifoundation.net;
pandey.shriprakash@gandhifoundation.net

यह पत्रिका गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन, गाँधी तीर्थ, जैन हिल्स, जलगाँव-425 001(भारत) के लिए प्रबन्ध सम्पादक द्वारा प्रकाशित तथा व्योमा ग्राफिक्स, पूना द्वारा मुद्रित। अंक-१, जनवरी-मार्च, २०१४

सभी चित्र गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन संग्रह से।

सम्पादकीय...

महात्मा गाँधी को 'राष्ट्रपिता' शब्द से सम्बोधित किये जाने की वैधानिकता पर एक बार फिर गम्भीर बहस छिड़ गयी है । यह मामला उस समय प्रकाश में आया जब लखनऊ, (उत्तर प्रदेश) की छठीं कक्षा की एक छात्रा कु. ऐश्वर्या पराशर ने गृह मंत्रालय से इस सन्दर्भ में सूचना के अधिकार के तहत पूछा कि गाँधीजी को 'राष्ट्रपिता' पहली बार कब और किसने कहा? ऐश्वर्या के इस यक्ष प्रश्न ने सरकार को असमंजस में डाल दिया। गृह मंत्रालय ने वह पत्र नेशनल आर्काइव्स ऑफ इण्डिया को भेज दिया, जहां भारत की आजादी से जुड़े सभी दस्तावेज सहेज कर रखे हुए हैं। किन्तु वहां से भी प्रश्न का कोई संतोषजनक समाधान नहीं मिल सका। फिर उसने केन्द्रीय सूचना आयोग को लिखा। केन्द्रीय सूचना आयुक्त श्री बसंत सेठ ने बताया कि बापू को इस तरह की कोई उपाधि नहीं दी गयी थी। न ही सरकार संविधान के तहत इस प्रकार की कोई उपाधि दे सकती है। देश के संविधान की धारा १८ (१) के अनुसार सरकार शिक्षा और सेना से सम्बन्धित उपाधियों के अलावा अन्य कोई उपाधि नहीं दे सकती। जब ऐश्वर्या को यह बताया गया कि गाँधीजी को ऐसी कोई उपाधि नहीं दी गयी है, तो उसने राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर महात्मा गाँधी को 'राष्ट्रपिता' घोषित करने की प्रार्थना की। उस बच्ची के इस प्रश्न ने एक नई बहस, एक नई हलचल को जन्म दे दिया जिसे संचार माध्यमों ने भी खूब वरीयता दी।

महात्मा गाँधी को 'राष्ट्रपिता' उपाधि किसने और कब दी, इस प्रश्न से अधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि क्या महात्मा गाँधी के लिये 'राष्ट्रपिता' की उपाधि सही, सार्थक और औचित्यपूर्ण है, या नहीं।

'राष्ट्रपिता' शब्द दो शब्दों से बना है– राष्ट्र और पिता। 'राष्ट्र' वस्तुत: जन (प्रजा), संस्कृति व क्षेत्र (भूमि) का समायोजित स्वरूप है। 'पिता' शब्द एक तो उस व्यक्ति के लिये प्रयुक्त होता है जो किसी समाज में उम्र की दृष्टि से सबसे वरिष्ठ हो, दूसरे उस व्यक्ति के लिये जो समाज या राष्ट्र की प्रजा के प्रति जीवनदान दिया हो, या राष्ट्र निर्माण में अद्वितीय योगदान दिया हो, उसे पिता कहा जा सकता है। भारतीय परम्परा के अनुसार –

जनिता चोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति।

अन्नदाता भयत्राता पञ्चैते पितर: स्मृता:।। (चाणक्यनीति ४.१९)

अर्थात् जन्म देनेवाला, उपनयन करनेवाला, शिक्षा देनेवाला, पालन करने वाला तथा जीवन में विभिन्न भयों से रक्षा करने वाला, ये पांच पिता ही होते हैं। अत: जिसने भारत की जनता को स्वतन्त्रता का सूर्य दिखलाया, सत्य और अहिंसा की शिक्षा दी, जिसने भारत की जनता को अंग्रेजों के भय से त्राण दिलाया, राष्ट्र निर्माण में जिसने अप्रतिम योगदान दिया, उसे यदि किसी ने राष्ट्रपिता कहकर सम्बोधित किया तो इसमें गलत क्या है? महात्मा गाँधी कभी भी औपचारिक रूप से सरकार द्वारा 'राष्ट्रपिता' घोषित नहीं किये गये। फिर उन्हें 'राष्ट्रपिता' की उपाधि किसने दी?

संविधान की इबारत लिखे जाने के बहुत पहले देश के प्रति गाँधीजी की प्रतिबद्धता और स्वतन्त्रता आन्दोलन में उनके अतुल्य योगदान के लिये नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने गाँधीजी को यह सम्बोधन कस्तूरबा गाँधी के निधन पर भेजे अपने शोक संदेश में दिया था। यह हमारी नई पीढ़ी के कितने लोगों को पता है? बा (कस्तूरबा गाँधी) और बापू दोनों भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान पुणे के आगा खां पैलेस में नजरबन्द किये गये थे। उसी दौरान २२ फरवरी १९४४ को कस्तूरबा गाँधी की मृत्यु हो गयी। सुभाषचन्द्र बोस को जब बा की मृत्यु का समाचार मिला तो उन्होंने आजाद हिन्द रेडियो रंगून से ४ जून १९४४ को महात्मा गाँधी के नाम प्रसारित अपने संदेश में कहा था –

'आपके भारत छोड़ो' के प्रस्ताव को यदि ब्रिटिश सरकार मानकर उस पर अमल करती है या हमारे देशवासी किसी तरह से प्रयास कर स्वयं को आजाद कराने में सफल होते हैं, तो शायद मुझसे ज्यादा प्रसन्नता किसी को नहीं होगी। लेकिन हमें लगता है कि ऐसा नहीं होगा और आपका आन्दोलन अप्रभावी रहेगा।

''हे हमारे देश के पिता! (राष्ट्रपिता) भारतीय स्वतन्त्रता के इस पुनीत संग्राम में हम आपके आशीर्वाद एवं शुभकामनाओं के अभिलाषी हैं''।

जब सुभाषचन्द्र बोस ने पहली बार गाँधीजी को 'राष्ट्रपिता' सम्बोधन दिया था, तब भारत के संविधान का जन्म भी नहीं हुआ था। ऐसे में 'राष्ट्रपिता' शब्द को संविधान की इबारतों में ढूंढ़ना और उस आधार पर भ्रामक प्रचार करना, उनके आदर्शों की हत्या करने से किसी भी रूप में कम नहीं है। नेताजी के बाद ३० जनवरी १९४८ को गाँधीजी की हत्या होने के बाद भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने रेडियो पर भारत राष्ट्र को सम्बोधित किया और कहा कि 'राष्ट्रपिता अब नहीं रहे।'

जहाँ तक उन्हें 'महात्मा' कह कर पुकारे जाने या सम्बोधन दिये जाने का प्रश्न है, ऐसा माना जाता है कि सर्वप्रथम गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने १२ अप्रैल १९१९ को गाँधीजी को एक पत्र लिखा था जिसमें उन्होंने उन्हें 'महात्मा' का सम्बोधन दिया था। इसके बाद गाँधीजी के साथ यह 'महात्मा' शब्द अनुलग्नक के रूप में लिखा जाने लगा और समूचे देश में इसे अघोषित मान्यता मिल गयी। किन्तु रवीन्द्रनाथ टैगोर से पहले भी गाँधीजी को 'महात्मा' सन्बोधन दिए जाने का उल्लेख दि. २१ जनवरी १९१५ को गुजरात के जेतपुर में गाँधीजी को दिये गये एक मानपत्र में मिलता है (देखें– कवरपृष्ठ –४)। महात्मा गाँधी उन्हें दी जानेवाली इस 'महात्मा' की उपाधि से कतई सहमत नहीं थे। अपने अनेक वक्तव्यों में उन्होंने अपने को महात्मा की उपाधि के लिये अयोग्य कहा है। किन्तु गाँधीजी के नाम से जुड़े 'महात्मा' और 'राष्ट्रपिता' ये दोनों अनुलग्नक समूचे देश में स्वीकार कर लिये गये।

अत: गाँधीजी को दी गयी 'राष्ट्रपिता' उपाधि की भले ही कोई वैधानिकता न हो किन्तु यदि महात्मा गाँधी जैसे व्यक्ति, जिसकी नेतृत्व क्षमता और देश के प्रति प्रतिबद्धता को सार्वभौम रूप से स्वीकार कर लिया गया था, उसे प्रेम, आदर और श्रद्धा पूर्वक कोई किसी उपाधि से सम्बोधित करता है तो इस पर किसी भी रूप में कोई विवाद खड़ा किया जाना उचित नहीं है।

यदि यह बात केवल संवैधानिक होने की है तो सरकार को आगे बढ़कर औपचारिक रूप से गाँधी को 'राष्ट्रपिता' घोषित कर देना चाहिये। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने जो गाँधी जी को सम्बोधन दिया, वह पंक्तियां न तो संविधान में दर्ज हैं और न ही इसका कोई लिखित दस्तावेज उपलब्ध है। ऐसे में दिन और दिनांक का क्या औचित्य है। क्या आत्म निरीक्षण के लिये इतना ही काफी नहीं है कि सारी दुनियां जिस व्यक्ति को शताब्दी का सर्वश्रेष्ठ मानव घोषित कर चुकी है, जिस व्यक्ति ने हमें अंग्रेजों की लम्बी दासता से मुक्ति दिलाई, उसको दी गई उपाधि पर हम प्रश्नचिह्न खड़ा कर रहे हैं? कविवर सुरेश उपाध्याय ने शायद सही कहा है कि:

अच्छा हुआ तूं गाँधी मर गया।
वरना आज होता तो रोज मरता।।

(डॉ. श्रीप्रकाश पाण्डेय)

राष्ट्रपिता का अप्रिय पितृत्व

जिस देश को महात्मा गाँधी ने ब्रिटिश उपनिवेशवाद की लम्बी दासता से मुक्ति दिलाई, उसी देश के कुछ लोगों ने आज महात्मा गाँधी की 'राष्ट्रपिता' की पदवी और उसकी वैधानिकता पर प्रश्न चिह्न खड़ा करने का प्रयास किया है। यह निश्चित रूप से उपकार का बदला अपकार से देने जैसा है। महात्मा गाँधी किसी पद, यश या लालसा के सर्वथा विरोधी रहे, यह कहने की आवश्यकता नहीं है। हम उन्हें 'राष्ट्रपिता' मानें या न मानें, उनके सद्विचारों की छाप हमारे हृदय पर सदा अंकित रहेगी। 'राष्ट्रपिता' उन्हें किसने और कब कहा, तथा उसके औचित्य पर चर्चा करता प्रस्तुत है श्री चन्द्रशेखर धर्माधिकारीजी[१] का भावपूर्ण लेख – ***सम्पादक***

महात्मा गाँधी हमारे क्या लगते हैं? यह प्रश्न मेरे समक्ष एक बार पुन: खड़ा हो गया। महात्मा गाँधी राष्ट्रपिता नहीं थे, यह बात पुन: किसी राजनैतिक नेता ने अभी-अभी कही है। उत्तर प्रदेश में भी किसी राजनैतिक नेता ने यही कहा था। मुझे यह सुनकर कोई बहुत बुरा नहीं लगा। क्योंकि इस देश में पिता को पिता न कहने वाले अनेक पुत्र हैं। चूंकि गाँधीजी राष्ट्रपिता मान लिये गये, तो आखिर वे सबके ही पिता हो गये। अत: प्रत्येक को अपने पिता के विषय में अच्छा-बुरा (चाहे जैसा) बोलने का जन्मसिद्ध अधिकार होने से, कोई भी उठता है और महात्मा गाँधी के विषय में चाहे जो बोलता है, तो उस पर प्रतिबन्ध लगाना कठिन है। एक दृष्टि से जो सबका पिता होता है, वह किसी भी विशिष्ट व्यक्ति का पिता नहीं होता। अत: भिन्न दृष्टि से लावारिस होता है। नगर निकाय की सड़क का वर्णन करते हुए कहा जाता है कि जो कूड़ा-कचरा डालने के लिये सबके बाप की मालिकी है। परन्तु सफाई करने के लिये वह किसी के भी बाप की नहीं होती। उसे नगर निकाय की सड़क या सार्वजनिक वस्तु माना जाता है। ऐसा ही कुछ महात्मा गाँधी के बारे में हो रहा या होने वाला है।

महात्मा गाँधी को किसी ने भारतपिता या हिन्दुस्तानपिता नहीं कहा, राष्ट्रपिता कहा है। यह भी किसी गाँधीवादी ने या गाँधी के अनुयायी ने नहीं कहा, अपितु देश-गौरव नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने कहा है।

मोहनदास करमचन्द गाँधी को 'महात्मा' की पदवी कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर ने प्रदान की थी, जबकि राष्ट्रपिता का सम्बोधन नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने दिया था। आजाद हिन्द फौज की योजना तैयार करते समय, उसकी भूमिका विशद करने के लिये सुभाषबाबू ने अपील के रूप में एक पत्र लिखा था। गाँधीजी देश में आन्दोलन शुरू करके स्वतन्त्रता प्राप्त करना चाहते थे। उधर सुभाष बाबू राष्ट्र के बाहर आजाद हिन्द सेना के प्रबन्ध में जुटे थे और भारतीय स्वतन्त्रता के लिये लड़ रहे थे। दोनों के मार्ग भिन्न थे, पर ध्येय एक था। इस कारण सुभाष बाबू ने ऐसे वाक्य का प्रयोग किया कि 'हमें अपने कार्य के लिये राष्ट्रपिता का आशीर्वाद चाहिये।' इस पत्र में नेताजी ने यह भी लिखा था कि गाँधीजी ने ही देश की सामान्य जनता में स्वतन्त्रता की आकांक्षा और भावना पैदा की है। सुभाष बाबू ने जब गाँधीजी को राष्ट्रपिता कहा, तब देश के सामान्यजनों को लगा कि मानो सुभाष बाबू की जुबान से उन्हीं की भावना व्यक्त हुई है। भारत के भिन्न धर्मीय, भाषीय, प्रान्तीय या जातीय लोगों में पारस्परिकता पैदा करके परतन्त्रता के विरुद्ध और स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये गाँधीजी ने जो आन्दोलन शुरू किया है उससे राष्ट्रीयता की 'एक राष्ट्र जनता' की आकांक्षा जागृत हुई, और तब लोग गाँधीजी को 'राष्ट्रपिता' कहने लगे। फिर भी महात्मा गाँधी राष्ट्रपिता थे या नहीं थे, यह मुद्दा गौड़ है। महात्मा गाँधी के पहले भारत एक संघ राष्ट्र था अथवा नहीं, या राष्ट्र भी था या नहीं? यही वास्तविक और मार्मिक प्रश्न है।

सर जॉन ट्रस्वी नामक प्रसिद्ध लेखक ने कहा था कि हिन्दुस्तान नाम का देश ही नहीं है, बाद में जॉन सिली नामक इतिहासकार ने लिखा कि अफ्रीका, यूरोप की भांति भरतखण्ड या हिन्दुस्तान भौगोलिक संज्ञा है, अन्योन्य भाव इस देश के लोगों में नहीं है। भारत को राष्ट्र न माननेवाले दो प्रकार के लोग हैं। इनमें कुछ विदेशी लेखक और राजनीतिक व्यक्ति हैं। भारत एक अस्तव्यस्त, बिखरा हुआ भूभाग है; उसे इतिहास नहीं, सामूहिक परम्परा या संयुक्त (सामूहिक) जीवन नहीं है, ऐसा आभास देनें में उनका स्वार्थी हेतु था और है। उनके मत में भारत भौगोलिक संज्ञा है। हमारे देश में भी ऐसे कुछ व्यक्ति हैं, जिनके मतानुसार भारत खंडों का प्रदेश है। भारत खंड यानि अनेक खंडप्राय राष्ट्रों का समूह है। अत: प्रत्येक प्रान्त की अपनी निजी संस्कृति, परम्परा, इतिहास, प्रकृति तथा अस्मिता है। प्रत्येक प्रान्त अपने को स्वतन्त्र राष्ट्र मानता है। यही स्थिति धार्मिक क्षेत्र में है। 'जितने धर्म उतने राष्ट्र' यही स्थिति दुर्भाग्य से भाषा, जाति और प्रदेश पर लागू होती है। भारत और बांगला देश का गंगा नदी के पानी का प्रश्न दो दिन में वचनबद्ध करार तथा समझौते से हल हो गया; परन्तु कावेरी नदी के पानी का प्रश्न जो कि भारत के ही दो पड़ोसी प्रदेशों का है, हल नहीं हो सका। क्योंकि प्रत्येक प्रदेश अपने को ही स्वतन्त्र देश और राष्ट्र समझता है। कावेरी नदी का पानी समुद्र में बह जाय तो चलेगा, परन्तु प्रतिस्पर्शी प्रान्त ने उपयोग किया तो नहीं चलेगा- ऐसी स्थिति है। सभी राजनैतिक दलों के प्रादेशिक नेता अपने ही दल के अन्य प्रदेशीय नेताओं के सामने इस पानी के बंटवारे को लेकर आन्दोलन ही नहीं, युद्ध करने के लिये खड़े हैं। देश और राष्ट्र की अपेक्षा प्रदेश-प्रादेशिकता अधिक महत्त्वपूर्ण लगती है। अत: जिस अर्थ में राष्ट्रीयता शब्द का प्रयोग किया जाता है, वह भावना इस देश में महात्मा गाँधी के राजनीतिक क्षितिज पर उदित होने के पहले नहीं थी और उनकी हत्या के बाद तो क्षीण होती जा रही है।

देश और राष्ट्र दोनों शब्द भिन्नार्थक और भिन्नवाचक हैं। देश भौगोलिक संज्ञा है, उसकी सीमायें हैं। नदी, पर्वत, भूप्रदेश का देश होता है। राष्ट्र केवल उस भूखंड पर बसने वाले लोगों का, नागरिकों का होता है। देश और मातृभूमि पर प्रेम करना आवश्यक है, पर इतना ही पर्याप्त नहीं है। उस देश के लोग हिलमिल कर प्रेम पूर्वक साथ-साथ जीने का जबतक संकल्प नहीं करते तबतक राष्ट्र का निर्माण नहीं होता। जमींदार भी जमीन पर प्रेम करता है, इस कारण उस गांव की प्रजा या जनता पर उसका प्रेम रहता ही है, ऐसी बात नहीं है। बल्कि उनका शोषण करते रहना यह उसकी जमींदारी का अधिष्ठान है। राष्ट्रीयत्व के मुख्य लक्षण- एक दूसरे के साथ रहने की तैयारी नहीं है, बल्कि इच्छा और आकांक्षा है। यह इच्छा और आकांक्षा कई बार एकतरफा ही होती है। नागालैण्ड के एक नेता ने पहले एक प्रश्न उठाया था कि भारतीय राष्ट्र नामक कोई चीज अस्तित्व में है क्या? भारत की जनता को नागा भूमि चाहिये, परन्तु नागा लोगों के प्रति उनमें प्रेम नहीं है। सारे नागा लोग देश के बाहर चले जांय, तो उन्हें वही चाहिये, उन्हें लैंड (जमीन) चाहिये; जनता नहीं। यही स्थिति कश्मीर की है। व्हिक्टर ह्यूगो नाम तत्त्ववेत्ता ने राष्ट्र की व्याख्या करते हुए कहा था 'जिस प्रकार मनुष्य का जीवन वही होता है जैसा उसने प्रतिदिन जीने का

संकल्प किया है वैसे ही परस्पर के साथ रहने का नित्य संकल्प होगा तो उसी को राष्ट्र कहा जायेगा, महात्मा गाँधी प्रवर्तित स्वराज-आन्दोलन के पहले इस देश में सामान्य नागरिकों के मन में क्या ऐसी भावना थी? यह मूलभूत प्रश्न है। बहुत पहले आदि शंकराचार्य ने धार्मिक भावना से और उधर सुरेन्द्रनाथ चटर्जी आई. सी. एस. की परीक्षा के सम्बन्ध में अखिल भारतीय प्रवास किये थे, यात्रा की थी। परन्तु उसके पीछे की प्रेरणा और भूमिका भिन्न थी। खंडित भरतखंड भारत राष्ट्र के रूप में अस्तित्व में आया। वह सुभाष बाबू के कथनानुसार गाँधीयुग में ही आया। परन्तु अब फिर उस राष्ट्र को खत्म करने का योजनाबद्ध कार्यक्रम शुरू है, यह पता नहीं क्या है, इसका भय तो है ही।

पूना (पुणे) में एक प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध व्यक्ति के अमृत-महोत्सव के प्रसंग पर उपस्थित धर्म-मार्तंडों ने घोषणा की कि हमने नाथूराम गोड़से की अस्थियां संभालकर सुरक्षित रखी हैं। सम्पूर्ण गोड़से कुटुम्बियों का सार्वजनिक सम्मान पूना में किया गया। क्योंकि नाथूराम गोड़से ने गाँधी हत्या का 'पुण्यकर्म' किया था। अब 'गाँधीवध' शब्द का प्रयोग किया जाता है, न कि गाँधी हत्या का। 'वध' राक्षस या दुर्जनों का होता है और वध करने वाले देव या पुण्यात्मा होते हैं। इस तरह नाथूराम गोड़से पुण्यात्मा हुआ क्योंकि उसने गाँधी का खून किया। नाथूराम गोड़से व्यक्ति नहीं था, प्रवृत्ति थी। उसका इस पर विश्वास था कि विशिष्ट व्यक्ति की हत्या कर दी जाय तो वह तो जाता ही है, उसका विचार भी नष्ट हो जाता है। अत: जिन लोगों को वैचारिक स्तर पर लड़ना नहीं आता, उन्होंने ऐसे व्यक्ति की हत्या या खून करना विचार नष्ट करने का सबसे प्रभावपूर्ण तरीका मान लिया। इसी कारण शायद संसार में सर्वत्र सभी महापुरुषों का अन्त हत्या द्वारा ही हुआ। गाँधी और गाँधी के विचार को खत्म करने के लिये नाथूराम गोड़से की विचारसरणि सामने आई। यह प्रवृत्ति अभी भी जड़ तक पहुंचना चाहती है यानी पक्की होना या जमना चाहती है। गाँधी राष्ट्रपिता नहीं थे, यह कहने वाले भारतीय राष्ट्र या एक राष्ट्रीयत्व की भावना का खून करके राष्ट्र को नष्ट करना चाहते हैं। ऐसी परिस्थिति का निर्माण हो गया है। किन्तु इस ओर देश का सज्जन वर्ग दुर्लक्ष्य कर रहा है। राष्ट्र से धर्म, भाषा और प्रदेश को अधिक महत्त्व दिया जा रहा है। इस देश का प्रत्येक टुकड़ा स्वयं को स्वतन्त्र राष्ट्र मानकर राष्ट्रपिता के पितृत्व के भी टुकड़े करने में ही गौरव मान रहा है। गाँधी राष्ट्रपिता नहीं थे, इस एक वाक्य के पीछे से सारी भावनायें (दुर्भावनायें) एकत्र होना चाहती हैं और यही राष्ट्रीयता के लिये भारी खतरा है।

आचार्य विनोबा का कहना था कि गाँधीजी के बलिदान के बाद हिन्दु-मुस्लिम समस्या रहनी ही नहीं चाहिये। ऐसे बलिदान से हिन्दुस्तान के सभी धर्मों की शुद्धि या परिसमाप्ति हुए बिना कोई उपाय या गति नहीं है। दोनों में से कुछ भी एक हुआ तो भी धार्मिक कलह मिटेगी। लोकनायक जयप्रकाशजी के अनुसार, 'लगता है बापू के बलिदान से इस देश की दानवता की प्यास नहीं बुझी, शायद इसे और बलिदान चाहिये।' जयप्रकाशजी के इन उद्गारों में बहुत तथ्य है, यह कहने का समय आ गया है।

भारतीय राष्ट्र को यह समझ लेना चाहिये कि बहुसंख्यक का अर्थ बहुमत नहीं है। क्योंकि मत परिवर्तन और हृदय परिवर्तन होना सम्भव है, यही लोकशाही का प्राण है और संसदीय लोकतन्त्र मतों पर आधारित होता है, संख्या पर नहीं। सभी कंधों पर मात्र एक ओर वही सिर सम्भव नहीं है। जितने कंधे उतने ही सिर होंगे और जिस-जिस के पास सिर और दिमाग है उसे भिन्न मत का अधिकार है। भिन्न मताधिकार का आदर ही लोकतन्त्र है। परन्तु जाति, धर्म, पुनर्जन्म की कल्पना या परलोक की कल्पना तो हमारे रग-रग में व्याप्त है, रक्त में घुल मिल गयी है, आचरण में उतर गयी है। इस कारण लोकतन्त्र के मूल्य जीवन में नहीं उतरे हैं। उम्मीदवारी लोकतन्त्र नहीं है। उम्मीदवार आवश्यक नहीं चरित्रवान प्रतिनिधि हो, जिसमें सत्ता की अभिलाषा न हो, जिसका फण्ड और गुण्डाशक्ति पर विश्वास न हो, जो पार्टीनिष्ठ, नेतानिष्ठ, दलनिष्ठ की अपेक्षा लोकनिष्ठ अधिक हो। आज सारी पार्टियाँ और नेता अपनी ताकत बढ़ाना चाहते हैं। ऐसा किसी को नहीं लगता कि जनता की शक्ति बढ़ाई जाय। आज तो नेता और सत्ताधारी जनता से संरक्षण चाहते हैं। अब तो रक्षक ही भक्षक हो रहे हैं। महात्मा गाँधी ने तो हत्या का प्रयत्न जानते हुए भी सुरक्षा लेने से इनकार कर दिया था। क्योंकि जो लोगों द्वारा संरक्षण चाहता है उसे परलोक में ही जाना चाहिए। गाँधीजी की भांति जनता में समरस होने वाले लोकनेता को ऐसा संरक्षण जनद्रोह ही लगता है। मनुष्य की स्वभावगत अच्छाई और मनुष्यता पर विश्वास ही सच्ची आस्तिकता है और यही अहिंसा की शक्ति है। मन में और जन-मानस में आदर की भावना ही सुरक्षा का कवच है। लोगों को मारने की कला में या शस्त्राभ्यास में प्रगति करके किसी की भी सुरक्षा करना संभव नहीं है, यह समझ लेना जरूरी है। क्योंकि ऐसी हिंसक शक्तियाँ तेजी से बढ़ सकती हैं, और अधिक बढ़ सकती हैं। पर हिंसा से हिंसा ही उत्पन्न होती है। पश्चिमी राष्ट्रों को शस्त्रों की शक्ति की मर्यादा ध्यान में आ गई है। उसपर से विश्वास भी उठता जा रहा है। अब उन्हें प्रकर्ष रूप में गाँधीजी के मूल्यों का भान होने लगा है। हमारे देश में पैसा, जाति, पंथ, धर्म, सम्प्रदाय आदि को विरोधी दल या पक्ष को पस्त या कमजोर करने का मार्ग मान लिया गया है। ये भी एक दृष्टि से प्रतिविरोधी पक्ष को खत्म करनेवाले हथियार ही हैं। इनका ढाल और तलवार की तरह दोहरा उपयोग होता है। इसीसे मौजमस्ती अय्याशी और व्यसन बढ़ते हैं। हम अन्य किसी के सगे, देश के, समाज के, परिवार के कुछ नहीं लगते यह वृत्ति भी बढ़ रही है। अतएव हिंसा के वैयक्तिक और सामाजिक कारण खोजकर उनके निराकरण का कार्यक्रम और योजना तैयार करना जरूरी है, जो सर्वजनीन और व्यापक होनी चाहिए और जीवन के सभी अंगों को स्पर्श करनेवाली हो। अत: सभी क्षेत्रों में हिंसा खत्म करके सक्रिय तथा सकारात्मक अहिंसा पर विश्वास जागृत करना ही महात्मा गाँधी के प्रति हमारी सच्ची आदरांजलि होगी।

संदर्भ-

१. खोज गाँधी की, गांधी विचार परिषद, वर्धा, २००८
पृ. ७२-७७

- न्या. चन्द्रशेखर धर्माधिकारी

प्रवेश सूचना

एम. ए.(गाँधी विचार एवं सामाजिक विज्ञान पाठ्यक्रम)

गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद द्वारा संचालित उपरोक्त पत्राचार पाठ्यक्रम (मराठी एवं हिन्दी माध्यम) शुरू है। वर्ष २०१४-१५ के लिए उक्त पाठ्यक्रम में प्रवेश हेतु विद्यार्थी किसी भी विद्याशाखा के स्नातक कक्षा में कम से कम ४० प्रतिशत अंक के साथ उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। अनुसूचित जाति एवं जनजाति के विद्यार्थियों के लिए ५ प्रतिशत की छूट है। अन्य जानकारी एवं प्रवेश हेतु सम्पर्क करें - **गाँधी इंटरनेशनल स्टडी एंड रिसर्च इंस्टीट्यूट,** गाँधी तीर्थ, जैन हिल्स, जलगाँव - ४२५००१, महाराष्ट्र. फोन - ०२५७-२२६०३८१, ०९४०४९५५२७२

मुझे बापू कहलाना ही अच्छा लगता है*

*इस स्तम्भ के लेखक मनु शर्मा एक जाने माने पत्रकार एवं लेखक हैं। उनकी यह रचना साहित्य की फैंटेसी (अतिकल्पना) विधा के अन्तर्गत आती है। इस विधा में लेखक अपने अभीष्ट पात्र को कल्पना में सामने रख उस पात्र से संवाद के जरिए उसके विचारों को शब्द रूप देता है। मनु शर्मा की प्रस्तुत रचना महात्मा गाँधी के संदर्भ में उठाये गये 'राष्ट्रपिता' के प्रश्न पर गाँधीजी के स्वयं के विचारों का प्रतिनिधित्व करती है। – **सम्पादक***

फिर एक लम्बा अंतराल हुआ। गाँधीजी से भेंट नहीं कर पाया। सोचा, वे नाराज हुए होंगे, क्योंकि उनकी अभिव्यक्ति का माध्यम तो मैं ही था। मेरे न रहने पर वे कैसा अनुभव कर रहे होंगे, सबकुछ देखते होंगे, समझते होंगे; पर कुछ कह नहीं पा रहे होंगे। वैज्ञानिक कहते हैं कि न कह पाने की असमर्थता तो मनुष्य को बहरा बना देती है। यह बहरापन गूँगे होने का वरदान है। यदि ऐसा न होता तो गूँगा सुनते-सुनते इतना भर जाता कि एक दिन उसे फूटना पड़ता। पर गाँधीजी के मामले में ऐसा नहीं हुआ होगा। वे तो सिंधु हैं। सिंधु भरता रहता है, पर कभी फूटता नहीं है। यह न फूटने का सामर्थ्य ही उसकी गंभीरता एवं विराटता के मूल में है।

ऐसा सोचकर मैंने गाँधीजी से फिर मिलने की हिम्मत जुटाई। सूर्योदय के कुछ पहले ही घर से निकल पड़ा। मेरे आवास के चारों ओर ग्वालों के बाड़ों में चहल-पहल शुरू हो गई थी। कहीं दूध दुहने की धारा की छरछराहट सुनाई दे रही थी, तो कहीं खाली-भरी बाल्टियों की खड़खड़ाहट। सड़क पर आते-आते मेरी गली का वह पहाड़ी पहरेदार बहादुर भी अपनी सीटी पॉकेट में डालता दिखाई दिया, जिसकी रात हमारे दिन शुरू होने के साथ-साथ शुरू होती है।

जब मैं टाउन हॉल की ओर बढ़ा, सड़क का सन्नाटा सवेरे की सैर के लिए निकले और कार्तिक स्नानार्थियों के आवागमन से टूटने लगा था। मैंने दूर से ही देखा, गाँधीजी की प्रतिमा ज्यों-कि-त्यों खड़ी थी। न कहीं हरकत, न जुंबिश। आशंका हुई कि बापू नाखुश होकर चले तो नहीं गए। नाराज होने का कारण भी था, क्योंकि मैं बिना सूचना दिए काफी दिनों तक गायब रहा। निकट पहुँचने पर मूर्ति में हरकत हुई। गाँधीजी धीरे-धीरे निकलते दिखाई दिए। उनकी मुस्कराहट ने नाराज होने की आशंका के गुब्बारे में पिन चुभो दी।

उन्होंने पुन: मुस्कुराते हुए पूछा, आज तुम बड़े भयभीत लगते हो?

क्या करूँ, मैं अपराध-बोध से ग्रस्त हूँ कि इस बार शहर से जाने के पहले आपसे मिल न सका। वे कुछ बोले तो नहीं। अपनी मूर्ति के पेडेस्टल की सीढ़ी पर बैठकर मुस्कुराते रहे।

मेरा साहस बढ़ा। मैंने कहा, राष्ट्रपिता को लेकर इधर बड़ी चर्चा है।

इतना सुनते ही वे खिलखिला उठे और बोले, अरे भाई, मुझे राष्ट्रपिता की उपाधि 'पदमविभूषण' या 'भारतरत्न' की तरह नहीं मिली है। यह सत्ता द्वारा पहनाया गया मेरे सिर पर कोई शोभा – मुकुट भी नहीं है। यह तो जनता के ममता भरे आशीर्वाद का प्रतीक है, जिसे महज एक व्यक्ति ने कहा और फिर सारी जनता ने उसे उठा लिया।

मैं यह नहीं पूछ सका कि वह एक व्यक्ति कौन है?

गाँधीजी बोलते गए, मैंने इसे (राष्ट्रपिता) सिर-माथे लगाया या नहीं लगाया, यह तो अलग बात है, पर जनता ने मेरे ऊपर टोपी की तरह

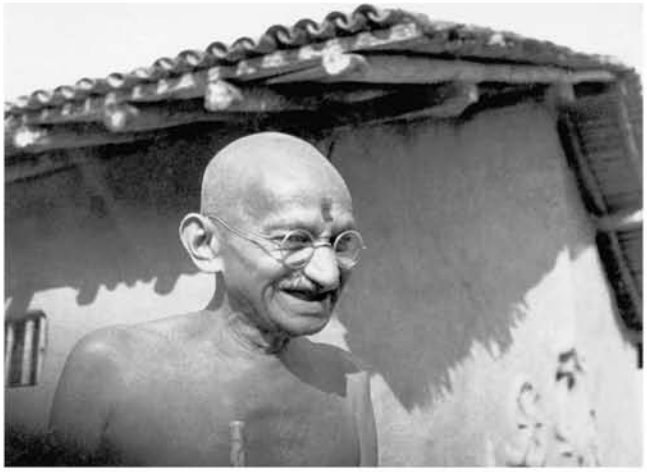

पहना अवश्य दिया। यद्यपि उन दिनों टोपी मेरे सिर से उतर चुकी थी न। उन्होंने फिर ठहाका लगाया और शीघ्र ही अपनी हँसी समेटते हुए विचारों में खो गए।

मैंने पुन: उन्हें कुरेदने की कोशिश की – आपने अभी कहा है कि एक व्यक्ति ने मुझे 'राष्ट्रपिता' कहा और जनता ने इस शब्द को मेरे साथ सदा के लिए जोड़ दिया। क्या मैं जान सकता हूँ कि वह व्यक्ति कौन है? और वह परिस्थिति क्या थी?

जहाँ तक मुझे याद है, ६ जुलाई, १९४४ को आजाद हिंद रेडियो से प्रसारित अपने भाषण में सुभाषचंद्र बोस ने सबसे पहले मुझे राष्ट्रपिता का संबोधन दिया था। बड़े आदर और सम्मान के साथ उन्होंने यह शब्द मेरे साथ जोड़ा था। बापू क्षण भर के लिए रुके, फिर बोले, यद्यपि यह शब्द भारतीय चिंतन परम्परा से मेल नहीं खाता। यह तो पश्चिम के 'फादर ऑफ नेशन' का अनुवाद है। हमारे यहाँ राष्ट्र के पिता की कोई कल्पना नहीं है। राष्ट्र स्वयं में एक अमूर्त धारणा है, जो राष्ट्र के व्यक्तियों के माध्यम से मूर्त होती है। यह धारणा उस व्यक्ति समूह की संस्कृति, सभ्यता, चिंतन परम्परा, धर्म, पूजा-अर्चना, जीवन-पद्धति आदि से निर्मित होती है। राष्ट्र की अवधारणा केवल नक्शे पर खींची गयी रेखाओं से नहीं बनती या आदमियों की बेशुमार भीड़ भी राष्ट्र की कल्पना को साकार नहीं करती। बहुत से लोगों की समान चिंतन परम्परा, जीवन-पद्धति तथा उनकी संस्कृति की अंतर्धारा ही राष्ट्रीयता का निर्धारण करती है। इसलिए राष्ट्र राज्य से ज्यादा मजबूत होता है।

पर यह बात मेरी समझ में नहीं आई। मैंने कहा और यह भी अनुभव किया कि आज बापू का दार्शनिक अधिक उभरकर सामने आया है।

बात तो साफ है। राज्य जीते जा सकते हैं, गुलाम बनाए जा सकते हैं, पर राष्ट्र गुलाम नहीं होता, जब तक वहाँ के व्यक्तियों का मन न जीता जा सके, उनकी जीवन-पद्धति न बदली जा सके, उनके चिंतन को गुलाम न बनाया जा सके। और जब चिंतन गुलाम हो जाता है तब उस गुलामी को उतार फेंकना बड़ा कठिन हो जाता है। यह तो तुम देख ही रहे कि अंग्रेज चले गए, पर हम अंग्रेजी चिंतन की गुलामी से आज भी मुक्त नहीं हो सके। हमारा राष्ट्रपिता भी इसी अंग्रेजी चिंतन की गुलामी का परिणाम है। पर मेरे इस कथन का यह अर्थ कभी नहीं है कि राष्ट्रपिता का सम्मान देनेवालों को मैं किसी प्रकार का मानसिक गुलाम कह रहा हूँ। मैं अपने प्रति उनकी श्रद्धा और पूज्यभाव से द्रवित हूँ।

तब तो इसका अर्थ यह हुआ कि हमारे यहाँ राष्ट्रमाता की भी कोई कल्पना नहीं है। मैंने कहा।

नहीं, ऐसी बात नहीं है। पश्चिम में राष्ट्रमाता की कल्पना नहीं है, पर हमारे यहाँ राष्ट्रमाता की स्पष्ट कल्पना है। माताभूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या:। नमो मात्रै पृथिव्यै, नमो मात्रै पृथिव्यै। – भूमि हमारी माता है और हम उसके पुत्र हैं। पृथ्वी माता को हमारा प्रणाम है। हमारे संस्कार में यह बात परम्परा से भरी जाती रही है। हम जब सुबह सोकर उठते हैं और धरती पर पैर रखते हैं तब अपनी इस माँ से क्षमा माँगते हुए कहते हैं –

समुद्रवसने देवि, पर्वतस्तनमण्डले।

विष्णुपत्नि: नमस्तुभ्यं पादस्पर्श क्षमस्व मे।।

(भारतमाता मंदिर, वाराणसी के उद्घाटन के समय दिए गए भाषण से।) इस प्रकार हमारे यहाँ राष्ट्रमाता की कल्पना है, राष्ट्रपुत्र की कल्पना है, राष्ट्र के सपूत की कल्पना है, पर राष्ट्रपिता की नहीं। तब मैं राष्ट्रपिता कैसे हो सकता हूँ? हमारे यहाँ पिता के अतिरिक्त और तो एक ही है – बस, परमपिता परमात्मा।

अब मैं भी थोड़ा खुला – चाहे पश्चिम की धारणा का प्रभाव हो या हम भारतवासी, जो आज पश्चिम के अनुवाद की जिंदगी जी रहे हैं, उसका प्रभाव हो, पर जब एक सम्मानार्थक शब्द किसी के नाम के आगे जुड़ जाता है तो उसका विरोध करना क्या उस व्यक्ति का असम्मान करना नहीं है; क्योंकि कोई शब्द भले ही कहीं का हो, कहीं से आया हो, जब प्रयुक्त होने लगता है तब उसकी एक छवि बन जाती है और अपनी सांस्कृतिक परम्परा के अनुसार वह एक इमेज भी ले लेता है।

गाँधीजी की खिलखिलाहट इस बार फिर उभरी। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा, तुम तर्क का सहारा ले रहे हो, पर वास्तविकता उसके विरुद्ध है। जो लोग मेरे राष्ट्रपिता का विरोध कर रहे हैं, वे मेरा असम्मान करना चाहते हैं या जो लोग इन विरोध करनेवालों का विरोध कर रहे हैं, उनके मन में मेरे प्रति अचानक बहुत बड़ा सम्मान जाग उठा है या उनके मन को कहीं ठेस लगी है, ऐसी कोई बात नहीं है। वास्तव में यह सब तुम्हारे देश की राजनीति करा रही है। इससे मुझे कुछ लेना-देना नहीं है। इस विवाद से न कहीं मेरा सम्मान बढ़ रहा है, न कहीं घट रहा है। मुझे दु:ख है तो इस बहस के पीछे लोगों की मनशा का अनुभव करके।

गाँधीजी यद्यपि चुप हो गए, फिर भी ऐसा लगा कि उनका मौन बोल रहा है। शीघ्र उनकी सोच ने वाणी ली – राष्ट्रपिता कहलाना मुझे बहुत अच्छा नहीं लगता। मेरे नाम के आगे महात्मा जोड़कर भी लोगों ने मेरा सम्मान किया, मुझे बहुत आदर दिया; पर बापू कहलाने में मुझे जो आनंद मिलता है वह इन दोनों संबोधनों में नहीं मिलता।

वे फिर मौन हुए। किन्तु मुझमें कोई नया प्रश्न जन्म ले, इसके पहले ही बापू बोल पड़े, राष्ट्रपिता तो मुझे ऊपर से ओढ़ा दिया गया। महात्मा धरती से उठकर खादी की तरह मुझसे लिपट गया। इन दोनों संबोधनों ने मुझे आम आदमी से दूर कर दिया। जब महात्मा नहीं था तब आम आदमियों के साथ था, उनका हमजोली था, भीड़ में घुसता था, धक्के-मुक्के भी खाता था। पर ज्यों ही महात्मा हुआ, ऐसा लगा कि मैं भीड़ के ऊपर उछाल दिया गया हूँ। अपनों का होकर भी अपनों से दूर हूँ। अब भीड़ मेरे नीचे से गुजर रही है।

गाँधीजी बोलते रहे – बापू सम्बोधन मुझे हर आदमी से जोड़ता है। मैं बापू कहनेवाले के परिवार का हो जाता हूँ। मेरे-उसके बीच की दूरी बड़ी ममता के साथ सिमट जाती है। इसीलिए मुझे बापू कहलाना बड़ा अच्छा लगता है। तुम्हें याद होगा, अपने पत्र के अन्त में बहुधा मैं बापू के आशीर्वाद ही लिखा करता था। कितना प्रिय है मुझे यह संबोधन!

संदर्भ –

* गांधी लौटे, मनु शर्मा, 'मुझे बापू कहलाना ही अच्छा लगता है' – सस्ता साहित्य प्रकाशन मंडल, दिल्ली. संस्करण-२००७, पृष्ठ क्र.९९-१०२

संस्मरण.....

पलायन कायरता है – अहिंसा नहीं

वास्तव में गाँधीजी की विचारधारा विशेषत: उनके अहिंसा दर्शन को लोग आज भी समझने का प्रयास कर रहे हैं। प्रश्न उठता है हिंसा कब अहिंसा है और अहिंसा कब व कहाँ एवं किन परिस्थितियों में अहिंसा है?

यद्यपि गाँधीजी ने लोगों को इसके गूढ़ार्थ को समझाने का प्रयास किया है लेकिन यह इतनी जटिल परिभाषा है कि इतनी आसानी से समझ में आनेवाली नहीं है। वास्तव में अहिंसा का फलक बड़ा ही विस्तृत व पावन है।

सम्भवत: सन् १९२३ के आसपास की बात है। गुजरात के किसी स्थान पर बड़े जोर का साम्प्रदायिक दंगा हुआ था। वहाँ के कुछ हिन्दू भागकर गाँधीजी से मिलने के लिए साबरमती आये और बड़े दर्द भरे शब्दों में दूसरे सम्प्रदाय के लोगों के अत्याचारों की शिकायत करने लगे। गाँधीजी बड़ी शान्ति से उनकी बात सुनते रहे। फिर बोले, "तुम लोगों ने इसका विरोध करने के लिए क्या किया?"

उन लोगों ने उत्तर दिया, साहब, क्या करते! आपकी अहिंसा ने हमारे हाथ-पाँव बाँध रखे हैं। इसी कारण पिटाई होती है।

सहसा गाँधीजी का चेहरा तमतमा आया। कठोर स्वर में वे बोले, सो तो ठीक है, पर मेरी अहिंसा ने यह तो नहीं कहा था कि तुम लोग वहाँ से भागकर अपनी कायरता की रिपोर्ट मुझे देने आते। मेरी अहिंसा तो ऐसे समय पर मर मिटने का संदेश देती है। तुम लोगों में यदि मर मिटने का साहस नहीं था तो अपने मत के अनुसार उस स्थिति का मुकाबला करना चाहिए था।

गाँधीजी कहते थे कि यदि तुममें अहंकार व निज सुरक्षा की भावना शेष है तो फिर तुम्हारा अहिंसा पथ पर चलना उतना आसान नहीं है, जितना तुम इसे सोच बैठे हो।

वास्तव में स्वयं के अहंकार का दमन ही अहिंसा है क्योंकि जिस दिन तुम्हारे अन्त:करण में स्थापित यह दानव मर जायेगा उस दिन तुम निर्भय व सत्य मार्ग पर चलने लगोगे, और तब तुम्हें विपदाओं व उसके परिणामों का भय नहीं सतायेगा।

– 'गाँधीजी के रोचक संस्मरण' द्वारा डॉ. कृष्णबीर सिंह से साभार

पिताजी की मृत्यु और मेरी दोहरी शरम

महात्मा गाँधी ने अपने जीवन में जो भी किया उसे खुली किताब की तरह सबके सामने रखा। अपनी बड़ी से बड़ी गलतियों को भी उन्होंने नहीं छुपाया। प्रस्तुत लेख में उन्होंने अपनी उस बड़ी गलती का उल्लेख किया है जिसके लिये वे जीवन भर अपने को माफ नहीं कर सके। बिरले ही होते हैं जो अपनी निजी जिंदगी की अन्तरंग घटनाओं और अनुभवों को लोगों से बांटते हैं। यह महात्मा गाँधी जैसा व्यक्ति ही कर सकता था। प्रस्तुत है उनकी रचना 'सत्य के प्रयोग' की अगली कड़ी में यह उनकी मार्मिक स्वीकारोक्ति। – ***सम्पादक***

उस समय मैं सोलह वर्ष का था। पिताजी भगन्दर की बीमारी के कारण बिल्कुल शय्यावश थे। उनकी सेवा में अधिकतर माताजी, घर का एक पुराना नौकर और मैं रहते थे। मेरे जिम्में 'नर्स' का काम था। उनका घाव धोना, उसमें दवा डालना, मरहम लगाने के समय मरहम लगाना, उन्हें दवा पिलाना और जब घर पर दवा तैयार करनी हो तो तैयार करना, यह मेरा खास काम था। रात हमेशा उनके पैर दबाना और इजाजत देने पर अथवा उनके सो जाने पर सोना, यह मेरा नियम था। मुझे यह सेवा बहुत प्रिय थी। मुझे यह स्मरण नहीं है कि इसमें मैं किसी भी दिन चूका होऊं। ये दिन हाई स्कूल के तो थे ही। इसलिये खाने-पीने के बाद का मेरा समय स्कूल में अथवा पिताजी की सेवा में ही बीतता था। जिस दिन उनकी आज्ञा मिलती और उनकी तबियत ठीक रहती, उस दिन शाम को टहलने जाता था।

इसी साल पत्नी गर्भवती हुई। मैं आज देख सकता हूं कि इसमें दोहरी शरम थी। पहली शरम तो इस बात की कि विद्याध्ययन का समय होते हुए भी मैं संयम से न रह सका, और दूसरी यह कि यद्यपि स्कूल की पढ़ाई को मैं अपना धर्म समझता था, और उससे भी अधिक माता-पिता की भक्ति को धर्म समझता था – और सो भी इस हद तक कि इस विषय में बचपन से ही श्रवण कुमार को मैंने अपना आदर्श मानता था – फिर भी विषय-वासना मुझ पर सवारी कर सकी थी। मतलब यह कि यद्यपि रोज रात को मैं पिताजी के पैर तो दबाता था, लेकिन उस समय मेरा मन शयन-गृह की ओर भटकता रहता था, और वह भी उस समय जब स्त्री का संग धर्मशास्त्र, वैद्यक-शास्त्र और व्यवहार-शास्त्र के अनुसार त्याज्य था। जब मुझे सेवा के काम से छुट्टी मिलती, तो मैं खुश होता और पिताजी के पैर छू कर सीधा शयन गृह में पहुंच जाता।

पिताजी की बीमारी बढ़ती जा रही थी। वैद्यों ने अपने लेप आजमाये, हकीमों ने मरहम पट्टियां आजमाईं, साधारण हज्जाम वगैरह की घरेलू दवायें भी कीं; अंग्रेज डाक्टर ने भी अपनी अक्ल आजमाकर देखा। अंग्रेज डाक्टर ने सुझाया कि शल्य-क्रिया ही रोग का एक मात्र उपाय है। परिवार के एक मात्र मित्र वैद्य बीच में पड़े और उन्होंने पिताजी की उत्तरावस्था में ऐसी शल्य-क्रिया को नापसन्द किया। तरह-तरह की दवाओं की बोतलें खरीदी थीं वे व्यर्थ गयीं और शल्य-क्रिया नहीं हुई। वैद्यराज प्रसिद्ध और प्रवीण थे। मेरा खयाल है कि अगर वे शल्य-क्रिया होने देते, तो घाव के भरने में कोई दिक्कत नहीं होती। शल्य-क्रिया उस समय के बम्बई के प्रसिद्ध सर्जन के द्वारा होने को थी। पर अन्तकाल समीप था, इसलिये उचित उपाय कैसे हो पाता? पिताजी शल्य-क्रिया कराये बिना ही बम्बई से वापस आये। साथ में इस निमित्त से खरीदा हुआ समान भी लेते आये। वे अधिक जीने की आशा छोड़ चुके थे। कमजोरी बढ़ती गयी और ऐसी स्थिति आ पहुंची कि प्रत्येक क्रिया बिस्तर पर ही करना जरूरी हो गया। लेकिन उन्होंने आखिरी घड़ी तक इसका विरोध ही किया और परिश्रम सहने का आग्रह रखा। वैष्णव धर्म का यह कठोर शासन है। बाह्य शुद्धि अत्यन्त आवश्यक है। पर पाश्चात्य वैद्यक-शास्त्र ने हमें सिखाया है कि मल-मूत्र-विसर्जन की और स्नानादि की सब क्रियायें बिस्तर पर लेटे-लेटे सम्पूर्ण स्वच्छता के साथ की जा सकती हैं और रोगी को कष्ट उठाने की जरूरत नहीं पड़ती; जब देखो तब उसका बिछौना स्वच्छ ही रहता है। इस तरह साधी गयी स्वच्छता को मैं तो वैष्णव धर्म का ही नाम दूंगा। पर उस समय स्नानादि के लिये बिछौना छोड़ने का पिताजी का आग्रह देखकर मैं आश्चर्य चकित होता था और मन में उनकी स्तुति किया करता था।

अवसान की घोर रात्रि समीप आई। उन दिनों मेरे चाचाजी राजकोट में थे। मेरा कुछ ऐसा खयाल है कि पिताजी की बढ़ती हुई बीमारी के समाचार पाकर ही वे आये थे। दोनों भाइयों के बीच अटूट प्रेम था। चाचाजी दिन भर पिताजी के बिस्तर के पास ही बैठे रहते, और हम सबको सोने की इजाजत देकर खुद पिताजी के बिस्तर के पास सोते। किसी को यह खयाल तो था ही नहीं कि यह रात उनकी आखिरी रात सिद्ध होगी। वैसे डर तो बराबर बना ही रहता था। रात के साढ़े दस या ग्यारह बजे होंगे। मैं पैर दबा रहा था। चाचाजी ने मुझसे कहा: ''जा, अब मैं बैठूंगा''। मैं खुश हुआ और सीधा शयन-गृह में पहुंचा। पत्नी तो बेचारी गहरी नींद में थी। पर मैं सोने कैसे देता? मैंने उसे जगाया। पांच-सात मिनट बीते होंगे, इतनें मैं जिस नौकर की ऊपर चर्चा कर चुका हूं, उसने आकर किवाड़ खटखटाया। मुझे धक्का सा लगा। मैं चौंका। नौकर ने कहा, 'उठो, बापू बहुत बीमार हैं''। मैं जानता था कि वे बहुत बीमार तो थे ही, इसलिये यहां 'बहुत बीमार' का विशेष अर्थ समझ गया। एकदम बिस्तर से कूद पड़ा।

''कह तो सही बात क्या है?'' जवाब मिला, ''बापू गुजर गये!''

मेरा पछताना किस काम आता? मैं बहुत शरमाया। बहुत दु:खी हुआ। दौड़कर पिताजी के कमरे में पहुंचा। बात मेरी समझ में आयी कि अगर मैं विषयान्ध न होता, तो इस अन्तिम घड़ी में यह वियोग मुझे नसीब न होता और मैं अन्त समय तक पिताजी के पैर दबाता रहता। अब तो मुझे चाचाजी के मुंह से ही सुनना पड़ा: कि ''बापू हमें छोड़कर चले गये''! अपने बड़े भाई के परम भक्त चाचाजी अन्तिम सेवा का गौरव पा गये। पिताजी को अपने अवसान का अन्दाजा हो चुका था। उन्होंने इशारा करके लिखने का सामान मंगवाया और कागज पर लिखा: तैयारी करो। इतना लिखकर उन्होंने अपने हाथ पर बंधा ताबीज तोड़कर फेंक दिया, सोने की कण्ठी भी तोड़कर फेंक दी और एक क्षण में आत्मा उड़ गयी।

पिछले अध्याय में मैंने जिस शरम का जिक्र किया है, वह यही शरम है- सेवा के समय भी विषय की इच्छा। इस काले दाग को मैं आज तक मिटा नहीं सका, भूल नहीं सका। मैंने हमेशा माना है कि यद्यपि माता-पिता के प्रति मेरी अपार भक्ति थी, उसके लिये मैं सबकुछ छोड़ सकता था, तथापि सेवा के समय भी मेरा मन विषय को छोड़ नहीं सकता था। यह उस सेवा में रही हुई अक्षम्य त्रुटि थी। इसीसे मैंने अपने को एक पत्नीव्रत का पालन करनेवाला मानते हुए भी विषयान्ध माना है। इससे मुक्त होने में मुझे बहुत समय लगा और मुक्त होने से पहले कई धर्म-संकट सहने पड़े।

अपनी इस दोहरी शरम की चर्चा समाप्त करने से पहले मैं यह भी कह दूं कि पत्नी ने जो बालक जन्मा वह दो या चार दिन जी कर चला गया। कोई दूसरा परिणाम हो भी क्या सकता था? जिन मां-बापों का अथवा जिन बाल-दम्पत्ति को चेतना हो, वे इस दृष्टान्त से चेतें।

– मोहनदास करमचंद गाँधी

आज की समाज रचना

जैन इरिगेशन सिस्टम के संस्थापक डॉ. भवरलाल जैन एक गम्भीर चिंतक हैं। अपने व्यवसाय तथा अन्य गतिविधियों के दौरान उन्हें विभिन्न सामाजिक एवं सरकारी संगठनों से रूबरू होना पड़ता है तथा तज्जन्य व्यावहारिक विसंगतियों का सामना करना पड़ता है। इन विसंगतियों और उनके संभावित समाधान हेतु वे सतत् चिंतन-मनन करते रहते हैं। अपने इन चिन्तनों को शब्द रूप दिया आपने अपनी मराठी कृति 'आज की समाज रचना' में। इस पुस्तक में आपने अपने इन्हीं सामाजिक एवं व्यावहारिक अनुभवों को पिरोया है। डॉ. भवरलाल जैन की इस रचना में गाँधी की चिंतनधारा का एहसास झलकता है।*

- सम्पादक

डॉ. भवरलालजी जैन

राजनेता और नौकरशाह

बेतहाशा बढ़ती जनसंख्या, विकसित होते उद्योग व्यवसायों का प्रसार, पाश्चात्य जीवनशैली का तेजी से बढ़ता हुआ प्रभाव, भौतिक सुविधाओं की लालसा, सत्ता प्राप्त करने हेतु राजनेताओं का षडयंत्र आदि की मानसिकता के परिणाम स्वरूप समाज में अपराधी प्रवृत्ति बढ़ने लगी। मजदूर संगठनों पर कब्जा और समाज में अपने गुट के वर्चस्व रखने तथा अन्य के प्रभाव को नष्ट करने के लिए राजनेताओं ने समाज में विद्यमान अपराधी तत्त्वों से साँठ-गाँठ की। इसी के साथ समाज के विशिष्ट समूहों ने अपने-अपने अधिकारों हेतु संघर्ष करने की रणनीति बनाई। इन संगठित वर्गों की मांगों की पूर्ति करना सरकार के लिए आवश्यक हो गया। पारस्परिक स्पर्धा करने वाले घटकों को संभालना राजनेताओं के लिए कठिन होने लगा। ऐसे में लोहे से लोहा को काटने वाले सिद्धांत को अपना कर राजनेताओं ने अपराधियों से साँठ-गाँठ की। गैरकानूनी काम करवाने के लिए किए गए अनुचित कार्यों पर पर्दा डालने या गैरकानूनी कार्यों के फलस्वरूप सजा पाने से बचने के लिए अपराधियों ने राजनेताओं से साँठ-गाँठ शुरू कर दी। दहशत का वातावरण बनाकर अपराधियों ने समाज पर अपनी पकड़ मजबूत बना ली। कालान्तर में यही अपराधी तत्त्व चुनाव जीतकर जनप्रतिनिधि बनने लगे। उनमें झुग्गी-झोपड़ियों के दादा, सट्टा-सम्राट, शराब भट्टी वाले, बिल्डर्स माफियाओं की गिनती होने लगी और अद्यतन हो रही है। फिर ग्राम पंचायत, नगर पालिका, जिला पंचायत, विधान सभा, संसद आदि में इन लोगों का चुना जाना आम बात हो गई। अंततः राजनीति में सक्रिय लोगों के लिए इस वर्ग से संबंध बनाए रखना अपरिहार्य हो गया। इसका कारण शायद यह भय भी रहा हो, क्योंकि अपराधी प्रवृत्ति के लोग जनता में प्रिय होने लगे हैं, ऐसा राजनेताओं को लगने लगा।

कभी-कभी राजनेता ऐसे अपराधी तत्त्वों को नियंत्रण में रखने के लिए उनकी आजीविका की व्यवस्था किसी न किसी संस्था द्वारा करा देने के प्रयत्न करते दिखाई देते हैं। प्रारम्भ में उन्हें ऐसा लगता था कि इससे गुंडागर्दी की प्रवृत्ति नियंत्रित हो जाएगी और अपराधियों में सुधार आयेगा। किन्तु एक अंतराल के पश्चात् ऐसी प्रवृत्ति के लोग सहज प्राप्त संपत्ति एवं प्रतिष्ठा को छोड़ना नहीं चाहते हैं। वे उनके गले की हड्डी बन जाते हैं। इस तरह बाहुबल के साथ धनबल आ जाने से समाज में एक नया समीकरण बनता दिखाई दे रहा है। अपने आरम्भिक काल में उन्हें राजाश्रय की आवश्यकता होती है। इसलिए वे सँभल कर चलते हैं। किन्तु कालांतर में वे राजनैतिक शक्ति को भी चुनौती देने लगते हैं। इन दोनों के संघर्षरूपी चक्की के दो पाटों में समाज पिसने लगता है। वह इसके विरुद्ध आवाज भी नहीं उठा सकता। ऐसे समय में प्रशासनिक अधिकारी कानून या अपनी सीमाओं का हवाला देकर मूक दर्शक बने रहते हैं।

समाज उस स्थिति में पहुँच गया है, जहाँ आम आदमी कुटिल राजनीतिज्ञों से पहले ही दूर हो चुका था अर्थात् उनके क्रियाकलापों से वह उदासीन हो चुका था। ऐसी स्थिति में उसकी प्रतिक्रिया, कलियुग है, इस कलियुग के प्रजातंत्र में ऐसा ही होगा, क्या करें? ये सब भाग्य की बातें हैं, चुप्पी साधने में ही सार है, आदि कह कर संतोष करने लगा। इस पर राजनेताओं की अपराधी वर्ग से घनिष्ठता और उनकी सहायता की स्वीकृति से जनता का रहा-सहा विश्वास भी जाता रहा। इसके अतिरिक्त राजनेता अपने जयकारे लगवाने, जब चाहें सड़क पर उतर कर बंद करवाने, रास्ता रोको, जुलूस निकालने, जनसभा आदि करके अपनी लोकप्रियता बढ़ाने लगे। इन सब कार्यक्रमों को सफल बनाने में बाहुबलियों का उपयोग करने लगे। समाज में हर नेता के अनुयायी, समर्थक, शुभचिंतक तो होते ही हैं, किन्तु इस प्रकार की व्यवस्था एवं प्रदर्शन से वे हिचकिचाने लगे। कारण आम आदमी की मानसिकता उनके जैसी नहीं होती है। अतः विवशता में ही क्यों न हो, राजनेताओं के लिए इन अपराधियों को अपने संपर्क में रखना, सँभालना, इकट्ठा रखना अपरिहार्य हो गया।

राजनेताओं के कृपापात्र लोगों की मिलीभगत से राजनीति में सक्रिय लोगों के चारों ओर लोकप्रियता वलय का निर्माण किया जाने लगा। प्रायः इनको भी समाज में राजनीतिक कार्यकर्ता के नाम से स्वीकृति मिलने लगी। अवसरवादी, स्वार्थी, जाति या धर्म के पुरस्कर्ता और अपराध जगत् के लोग भी इस श्रेणी में आ गए। इन कार्यकर्ताओं ने घर-घर, परिवारों, जातियों, जनजातियों, गाँवों, गली-मुहल्लों, शहरों के प्रत्येक वार्डों में अपने पक्षपातपूर्ण व्यवहार से दबाव, तनाव, मनमुटाव और कट्टरतापन बढ़ाने का कार्य किया। धीरे-धीरे इसका रूपांतरण मार-पीट, गुंडागर्दी, ऊधमबाजी, खून-खराबा और दंगे-फसाद के रूप में स्थिर हो गया। सामाजिक शांति, सहिष्णुता कोसों पीछे छूट गई। ऐसे घटक, राजनेताओं और अधिकारियों से सीधे आश्रय, समर्थन एवं संरक्षण पाने लगे। इस प्रकार समाज में एक और समीकरण पनपा जिसमें राजनेता, समाजद्रोही, अपराधी, शरारती गुंडे आदि सम्मिलित हो गये। विरोधी दल के लोग समाज के अतिवादी घटकों की सहायता से सत्तापक्ष को त्रस्त करने के लिए

* 'आजची समाज रचना, तिचे स्वरूप व पुनर्बांधणी' के डॉ. योगेंद्र यादव द्वारा किए गये हिंदी अनुवाद 'आज की समाज रचना' से साभार.

उन्हें संरक्षण देने लगे। किंतु यही लोग इस दल के सत्ता में आने पर उनके लिए सिरदर्द बन जाते हैं। ऐसे में परस्पर विरोधी भूमिकाओं में सामंजस्य बिठाना, एक दूसरे से मिल कर रहना, उनके लिए कठिन हो जाता है। ऐसे में राजनेता भी विवश हो जाते हैं। परन्तु इस कालावधि में निर्दोष और असहाय समाज तो पिस चुका होता है।

प्रजातंत्र एवं राजनैतिक जीवन में अपना अस्तित्व, समाज पर अपनी मजबूत पकड़ भी बनाये रखना पड़ता है, क्योंकि एक निश्चित कालावधि में होने वाले चुनाव में जनता के बीच में जाना पड़ता है। इसके लिए जनता का समर्थन मिलना आवश्यक होता है। चुनाव प्रक्रिया में राजनेता साधारणत: नौकरशाहों का उतना उपयोग नहीं कर पाते हैं जिससे चुनाव के नतीजे परिवर्तित हो जाएँ। व्यापारी, उद्योगपतियों के धन का उपयोग भी मर्यादित रूप में ही होता है। कुछ राज्यों को छोड़ कर, आज भी भारतीय राजनीति में नौकरशाहों और पूँजीपतियों के धन का प्रत्यक्ष रूप से उपयोग होता दिखाई नहीं देता है। चुनावों में पैसों के बिना तो बात बनती नहीं है। चुनाव एक अत्यंत खर्चीली प्रक्रिया हो गई है। कुछ उम्मीदवार चुनावों में बड़े पैमाने पर धन का उपयोग करते हैं किन्तु उसका सर्वव्यापी प्रभाव हो, ऐसा नहीं कहा जा सकता है।

आज आम आदमी से संपर्क करने के लिए प्रत्याशी को प्रसार माध्यमों जैसे वीडियो, दूरदर्शन, समाचारपत्रों, पत्रिकाओं आदि का उपयोग करना लगभग अनिवार्य सा है। परिणामस्वरूप राजनैतिक दलों के उम्मीदवार इन माध्यमों से प्रेम पूर्ण व्यवहार रखते हैं। दूसरे शब्दों में - ये माध्यम इन्हीं उम्मीदवारों, राजनैतिक दलों के आस-पास समाचारों, विज्ञापनों के लिए मँडराते व चक्कर काटते दिखाई देते हैं। इसके अलावा राजनेताओं को अपने गैरकानूनी कार्यों पर पर्दा डालने या कम से कम उन्हें उजागर न होने देने के लिए सदैव सचेत रहना पड़ता है और ऐसे ही समाचार अपने (क्षेत्र में) प्रमुखता के सुभीते के लिए प्रसार माध्यम आवश्यक समझते हैं। साधारणत: अधिकांश प्रसार माध्यमों के जीवित बने रहने का मुख्य साधन विज्ञापन ही है। आज प्रिन्ट तथा इलेक्ट्रानिक मीडिया का ध्यान विज्ञापन की ओर है। सरकार और उसकी विविध संस्थाओं से विज्ञापन प्राप्त करना, उनका प्रकाशन कर उन्हें बेचना आदि गतिविधियों पर ही इनका ध्यान केन्द्रित रहता है। इसके साथ ही जनता पर राजनीतिज्ञों का अपेक्षित प्रभाव डालने के लिए भी इन माध्यमों की आवश्यकता होती है। इन माध्यमों के द्वारा समाज में व्याप्त विविध विचारधाराओं से सम्बंधित बुद्धिजीवियों के विचार प्रस्तुत करने का प्रबंध भी किया जा सकता है । उससे जनसंपर्क करने, उसे प्रभावित करने के लिए राजनेताओं से प्रसार माध्यमों और तथा कुछ परिमाण में बुद्धिजीवियों से मिली-भगत और साँठ-गाँठ अपने आप हो जाती है।

राजनेता इन माध्यमों में कार्यरत कर्मचारियों को किसी न किसी प्रकार से खुश रखना आवश्यक मानते हैं। इसलिए प्रजातंत्र को प्रभावित करने वाले इन माध्यमों को भी पूर्णत: निष्पक्ष रख कर सच झूठ की जानकारी लेना, पहचान करना, व्यावहारिक रूप से दुष्कर हो जाता है। ये माध्यम आम आदमी की राय को महत्त्व न देकर अपने विज्ञापन दाता या सम्बंध रखने वाले राजनेता के पक्ष में वातावरण बनाते अधिक दिखाई देते हैं। आज के हमारे प्रजातंत्र के सबसे शक्तिशाली घटक संचार माध्यमों के लिए इन कारणों से पूर्णत: निष्पक्ष रह कर अपने कर्तव्य का निर्वहन करना कदापि संभव नहीं है। अन्य समीकरणों की तरह इस क्षेत्र में भी अपवाद पाये जाते हैं। कुछ माध्यम ईमानदारी से समाज प्रबोधन का कार्य करते रहते हुए अपने सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वहन करते हैं। किन्तु अनेक स्तरों पर दोनों-तीनों समीकरणों की अभद्र साँठ-गाँठ का भयावह चित्र देखने को मिलता है। ऐसी स्थिति में जनमानस भ्रमित होकर दिशाहीन होता हुआ दिखाई देता है। जिन्हें पथ प्रदर्शक माना उसे ही पथ-भ्रष्ट और प्रवाह-पतित देख कर समाज में कुंठा और निराशा की छाया पड़ती दिखाई देती है। राजनीतिज्ञों एवं प्रसार-माध्यम की यह गठजोड़ समाज पर दूरगामी परिणाम डालने वाली, अधोगामी एवं खतरनाक खेल है, क्योंकि इसकी परिधि, प्रभाव व परिवेश अत्यंत विस्तृत है।

समाज का एक वर्ग ऐसा भी है, जो संख्या में भले ही कम हो किन्तु राजनेताओं, कुछ अधिकारियों और उद्योगपतियों पर अपनी पकड़ बना चुका है। यह वर्ग पाखंडियों, संन्यासियों, साधुओं, ज्योतिषियों या धार्मिक भावनाओं को भड़का कर समाज की शांति एवं सहृदयता को नष्ट करने में तत्पर लोगों का है, जो सत्ता के इशारे पर अपना काम करते हैं। राजनैतिक जीवन में हमेशा दिखाई देने वाली अस्थिरता कभी भी कुछ भी हो सकता है; हर स्तर पर इस बात का अनुभव करा कर सभी जाति-पंथ के लोगों का मत पाने के लिए राजनेता लोग उपर्युक्त प्रवृत्ति के लोगों से सम्बन्ध रखते हैं। समाज में यह प्रक्रिया गत पाँच दशकों में पूरी तरह से स्पष्ट रूप में दिखाई दे रही है। इसलिए राजनेताओं के तर्कपूर्ण, वस्तुनिष्ठ निर्णयों पर भी लोगों का भरोसा नहीं रह गया है। समाज में फैली अंधश्रद्धा एवं धर्मांधता के कारण कई बार कष्टदायक निर्णय भी जनता लेती हुई दिखाई देती है। आज धर्मों, धार्मिक संस्कारों या धार्मिक संस्थाओं का आम आदमी के लिए अधिक महत्त्व नहीं रहा। किन्तु अवसरवादी राजनेता इनका उपयोग करने के लिए सदैव ही तत्पर रहते हैं। व्यवसायी प्रवृत्ति के साधु-संत एवं धर्मार्थ संस्थाएँ भी इन प्रवृत्तियों को यदा-कदा जीवित रखने का प्रयास करती हुई दिखाई देती हैं।

अपने आरम्भिक काल में राजनेता और नौकरशाह दोनों एक-दूसरे के पूरक थे। किन्तु आज-कल ऐसा दिखाई देता है कि नौकरशाह स्वतंत्र रूप से व्यापारी, उद्योगपतियों या आम आदमी से मिल कर अपना स्वार्थ सिद्ध कर लेते हैं। ऊपर तक जाने की क्या आवश्यकता है? हम ही आपस में तय कर लेते हैं, इस प्रकार अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे अब जरूरतमंदों से मिल कर एक-दूसरे को लाभान्वित करते रहते हैं। इस प्रकार स्वभावत: समाज के हितों, कानूनों व नियमों को ताक पर रख कर अनेक काम हो जाते हैं। राजनेता भी अपने उचित-अनुचित कार्य करवाने के लिए अधिकारियों की सहायता लेते हैं। इससे नौकरशाहों का वर्चस्व स्पष्ट रूप से बढ़ता हुआ दिखाई देता है। व्यावहारिक रूप में उच्च, मध्यम या निम्न स्तर के अधिकारियों से आम आदमी का हर दिन काम पड़ता ही रहता है। अत: शीघ्र, मनोनुकूल, प्राथमिकता से कार्य करवाने के लिए अधिकारियों की कृपा प्राप्त करना आवश्यक होता है। इसके लिए सौदेबाजी का कार्य हर कार्यालय में देखा जा सकता है।

इसी के परिणामस्वरूप नौकरशाही की विश्वसनीयता खण्डित एवं समाप्त होती हुई दिखाई देती है। नौकरशाहों के इसी कृत्य के कारण समाज में उनके प्रति घृणा फैल रही है। पहले राजनेता एवं नौकरशाह आपसी समन्वय से समाज का शोषण करते थे। वर्तमान में नौकरशाह उद्दण्ड होते दिखाई दे रहे हैं। फिर भी राजनेता ऐसे मामलों में या तो उदासीन रहते हैं या नजरअंदाज कर देते हैं। अपवादस्वरूप कुछ अधिकारी आज भी अपने विवेक का उपयोग कर विधिसम्मत कार्य करते हैं। जिसके कारण उन्हें राजनेताओं का कोपभाजन भी बनना पड़ता है और कुछ समय में हर स्थान और विभाग से उनका स्थानांतरण होता रहता है। ऐसे ईमानदार तथा कर्तव्यपरायण अधिकारियों को समाज की ओर से भी कोई विशेष सुरक्षा नहीं मिलती है। इस प्रकार इन लोगों को ऐसे कष्ट तो भुगतने ही पड़ते हैं।

क्रमश:

'बा का अवसान'

*मनुबहन गाँधी, महात्मा गाँधी के बेहद करीब रहे कुछ लोगों में से एक हैं। वह गाँधीजी के चाचा श्री जयसुखलाल गाँधी की पुत्री थीं। गाँधीजी जब सेवाग्राम में थे तभी १९४२ में वह उनके पास रहने के लिये आ गयी थीं। तब से अन्त तक वह बा और बापू की सेवा और सान्निध्य में रहीं। पूना के आगा खाँ महल में २२ फरवरी १९४४ को जब बा का देहावसान हुआ, मनुबहन उनके साथ थीं। बा के देहावसान का पूरा विवरण उन्होंने अपनी डायरी जो बाद में ''बा और बापू की शीतल छाया में ''(नवजीवन प्रकाशन १९५४) नाम से पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुई, में दिया है। बा की पुण्यतिथि २२ फरवरी पर प्रस्तुत है उसी डायरी के कुछ अंश मनुबहन के शब्दों में। – **सम्पादक***

आज का दिन भयंकर है, इसकी आगाही सबके मन में थी। सब रातभर जगे थे। प्रातः बा सुशीला बहन की गोद में थीं। बापूजी अपने दैनिक भोजन की 'कैलरीज' लिख रहे थे। मैं बा के पैर दबा रही थी। वे सुशीला बहन से कहने लगीं: ''मुझे बापूजी के कमरे में ले चलो।'' इस पर सुशीला बहन ने मुझे इशारे से समझाया कि बा घूमने की तैयारी कर रही हैं, तू उठ और चादर वगैरा दे।

बापूजी मुंह धोकर बा के पास गये। सुशीला बहन उठीं और मैं वहां बैठी। बापूजी ने कहा: ''मैं टहलने जाऊं न?'' बा ने मना कर दिया। रोज उन्हें कितनी भी तकलीफ क्यों न हो, वे बापूजी को टहलने से मना नहीं करती थीं। लेकिन आज मना कर दिया। मेरी जगह बापूजी बैठे। रामधुन इत्यादि हो रहा था। परन्तु बापूजी की गोद में उन्हें थोड़ी शान्ति मिली। आधे घंटे बाद बापूजी ने दुबारा कहा : ''अब मैं जाऊँ ?'' ''हे राम! अब कहां जाऊँ ?''

बापूजी ने कहा : जाना कहां ? जहां राम ले जाय वहीं। दस मिनट बाद बा ने अढ़ाई औंस गरम पानी और शहद लिया।

लगभग दस बजे बापूजी को छुट्टी मिली। बापूजी कहने लगे: ''बिलकुल न टहलूं तो बीमार पड़ जाऊँ, इसलिये थोड़ा टहलना जरूरी है। ''सुशीला बहन वहां बैठीं। घूमते समय बापूजी कहने लगे अब बा थोड़े ही समय की मेहमान हैं, मुश्किल से चौबीस घंटे निकाले तो निकाले। देखना है किसकी गोद में वह अन्तिम निद्रा लेती है। पांच चक्कर लगाकर ऊपर आये। पांच -पांच मिनट में डॉ. गिल्डर आकर देख जाते । बापूजी घूमकर जल्दी से मालिश और स्नान से निपट लिये। पिछले दो दिन से सतत् जागरण होने के कारण पिसे हुए बादाम लेना भी उन्होंने बन्द कर दिया है। मैंने बापूजी से कहा : ''आज भी बादाम-काजू नहीं लेंगे?''

बापूजी बोले: ''या तो बा अच्छी हो जाय तब लिया जाय या बा रामजी के पास चली जाय तब लिया जाय। चबानें में समय लगाना ही चाहिये। न खाया जाय तो कुछ भी हानि नहीं, परन्तु अधकचरा पेट में जाय तो मुझे खटिया ही पकड़नी पड़े।'' इसलिये उबाले हुए शाक के कचूमर में दूध डालकर मैंने बापूजी को दिया, जिसे वे पी गये।

बापूजी साढ़े बारह बजे बा के पास गये। सबका यह खयाल हो गया था कि बा किसी भी क्षण जा सकती हैं। देवदास काका, मेरे पिताजी और हरिलाल काका की पुत्रियां आ गयी थीं। इसलिये बापूजी जरा देर के लिये आराम करने गये। मैंने बापूजी के पैरों में घी मला। बीस मिनट बापूजी ने आराम किया। डेढ़ बजे कनुभाई ने कुछ फोटो लिये और देवदास काका

चिरनिद्रा में लीन बा

गीता पाठ पूरा करके बा के पास आये। बा उनसे कहने लगीं : ''बेटा, तूने मेरे लिए बहुत धक्के खाये। रामदास को मना कर देना। वह बेचारा बीमार है। यहां तक क्यों उसे दौड़ाया जाय ? तुम सब खूब सुखी रहो।''

साढ़े तीन बजे देवदास काका गंगाजल और तुलसी के पत्ते ले आये। इसे पीने के लिये बा ने मुंह खोला। देवदास काका ने थोड़ा जल पिलाया और बा शान्त पड़ी रहीं। साढ़े चार बजे फिर बापूजी की तरफ देखकर वे कहने लगीं: ''मेरे लिए लड्डू खाने चाहिये। दुःख कैसा? हे ईश्वर, मुझे क्षमा करना; अपनी भक्ति देना।'' दूसरे सम्बन्धी आये थे उन सबसे बा बोलीं : ''कोई दुःख न करना।''

पांचे बजे बा मुझसे कहने लगीं: ''बापूजी की बोतल में गुड़ खतम हो रहा है। तूंने दूसरा बनाया?'' मैंने कहा: हां, बा, गुड़ अंगीठी पर ही है; अभी तैयार हो जायेगा।''

''देख, मेरे पास तो बहुत लोग हैं, बापूजी के दूध-गुड़ (खाने) का इन्तजाम करके तूँ भी खा लेना।''

जिन्दगी भर बापूजी की हर तरह की सेवा में रहने और मुख्यतः उनके दोनों समय के भोजन की बारीक जांच रखने का काम बा ने कभी नहीं छोड़ा। आज आखिरी दिन भी बिमारी और भगवान से लड़ते उन्होंने एकाएक मुझे सचेत किया। इस समय वे मेरे पिताजी की गोद में थीं। मुझसे बोलीं: ''जयसुखलाल यहां है, तू जा।''

पेन्सिलिन का इंजेक्शन विशेष वायुयान द्वारा आ गया था। इसलिये बापूजी, देवदास काका, डॉ. गिल्डर, सुशीलाबहन, प्यारेलालजी, कर्नल शाह, भंडारी, कटेली साहब सभी इस चर्चा में मशगूल थे कि इंजेक्शन दिया जाय या नहीं।

मैं भोजनालय में गई। गुड़ बना लेने के बाद उसे ठंडा करने को पानी में रखा। बेचारी सुशीलाबहन ने सुबह से कुछ खाया नहीं था, इसलिये वे खाने आईं और लोग भी खानेवाले थे, इसलिये मैंने खिचड़ी, कढ़ी, रोटी वगैरह बनाया और जिन दो-चार लोगों का शिवरात्रि का उपवास था, उनके लिये अलग मेज पर फलाहार तैयार किया। सब कुछ तैयार करके सबको साढ़े पाँच बजे बुलाया। सबके खा-पीकर निपटते-निपटते साढ़े छह बज गये।

अभी तक पेन्सिलिन के इंजेक्शन देने न देने की चर्चा का अन्त नहीं हुआ था। खाते-खाते भी बातें हो रही थीं कि पेन्सिलिन से शायद फायदा हो जाय। अन्त में लगभग सात बजे सुशीला बहन ने मुझे इंजेक्शन की सुइयाँ उबालने को दीं। मैंने बिजली के चूल्हे पर बर्तन में उन्हें रखा और शाम हो जाने से तुलसी के पास धूप-दीप करने की तैयारी की।

इधर बापू दूध पीकर मुँह धोने गये। स्नानघर में मुँह धोकर थोड़ा घूमना था। परन्तु प्यारेलालजी के कमरे में देवदास काका थे, इसलिये उनसे बातों में लग गये। मैंने एकाएक सुशीला बहन से कहा: आपकी दी हुई इंजेक्शन की सुइयाँ तो कभी से उबल गई होंगी। मैं तो भूल ही गई। वे बोलीं: बापूजी ने इंजेक्शन देने से मना कर दिया, इसलिये मैंने चूल्हा बुझा दिया है।

मेरे कानों पर बापूजी के इतने ही शब्द पड़े कि: अब तेरी मरती हुई माँ को सुई क्यों चुभोया जाये? परन्तु ये शब्द सुने न सुने कि मैं दिया जलाने की जल्दी में होने से वहाँ से चली गई। मैंने दिया जलाया। बा ने सबसे जयश्रीकृष्ण कहा। प्रभावती बहन और मेरे पिताजी उनके पास थे। इतने में बा के भाई माधवदास मामा आ गये। उन्हें देखा। बोलना चाहती होंगी, परन्तु कुछ बोल नहीं सकीं। एकाएक कहा: 'बापूजी'। सुशीला बहन आ रही थीं। बापूजी को याद करते ही उन्हें बुलाया। बापूजी हँसते-हँसते आये। कहने लगे: तुझे यह खयाल होता है न कि इतने सारे सन्बधियों के आ जाने से मैंने तुझे छोड़ दिया? यों कहकर बापूजी मेरे पिताजी के स्थान पर बैठे। धीरे-धीरे बा के सिर पर हाथ फेरा। बापूजी से कहने लगीं: अब मैं जा रही हूँ। हमने बहुत सुख-दु:ख भोगे। मेरे लिये कोई न रोये। अब मुझे शान्ति है। इतना बोलीं कि सांस रुक गई। कनुभाई फोटो ले रहे थे, परन्तु बापूजी ने रोक दिया और रामधुन गाने को कहा। हम सब राजा राम राम राम, सीता राम राम राम गाने लगे। राम राम के अन्तिम स्वर सुने न सुने कि दो मिनट में बा ने बापूजी के कंधे पर सिर रखकर सदा के लिये नींद ले ली!

बापूजी की आँखों से दो बूँद आँसुओं की निकल पड़ीं। उन्होंने चश्मा उतार दिया। मैं तो मूढ़ की तरह देखती ही रह गई। क्या क्षणभर पहले की बा की प्रेमपूर्ण आवाज अब सुनाई नहीं देगी? मनुष्य दो ही क्षण में इस प्रकार सबको छोड़कर चला जाता है, यह दृश्य मेरी जिन्दगी में पहला ही था।

बापूजी दो ही मिनट में स्वस्थ हो गये, परन्तु देवदास काका का रुदन देखा नहीं जाता था। माँ से बिछुड़े हुये छोटे बच्चे की भाँती वे बा के पैर पकड़कर करुण क्रन्दन करने लगे। ऐसी हालत में हमारी किसी की क्या हिम्मत रहती? उस दु:खद घड़ी का शब्दों में वर्णन करने की मुझमें शक्ति नहीं है।

७ बजकर ३५ मिनट की संध्या महाशिवरात्रि की थी। मन्दिरों में आरती हो रही थी। ऐसे समय हमें रोते-बिलखते छोड़कर भगवान बा को अपने धाम में ले गये। पाँच मिनट बाद बापूजी ने बा को तकिये पर सीधा सुलाया और उठे। देवदास काका को शान्त किया। मुझसे बोले: तेरी सेवा तो अभी पूरी नहीं हुई। यूँ रोयेगी तो बा का जी कितना दुखेगा? आखिरी वक्त की उसकी जो इच्छा थी वह तो तुझसे कह ही दी है। तूँ रोने बैठ जायेगी तो बा जो चाहती थीं सो नहीं हो सकेगा; तब उसकी आत्मा को शान्ति कैसे मिलेगी? मुझे उठाया। दरवाजे के बाहर भी बहुत रिश्तेदार थे, परन्तु सरकारी हुक्म के बिना भीतर कैसे आते?

'बा' के शव को स्नानागार में लाये। आगा खाँ महल में आई तब से बा के सिर के बाल मैं ही धोती और कंघी भी मैं ही करती थी। आज मैंने उनके बाल शिकाकाई के साबुन से आखिरी बार धोये। नहलाने में और लोग भी मेरे साथ थे। बाल धोकर जिस कमरे में बा ने अन्तिम श्वांस लिया उसकी सफाई में कनुभाई का हाथ बँटाने गई। गोमूत्र और गोबर से जगह लीपकर पवित्र की। मीरा बहन ने जितने भाग में शव रहे उसमें चूने से चौरस बनाकर सिर की ओर के हिस्से में फूलों से 'ॐ' बनाया और पैरों की तरफ के हिस्से में 'स्वस्तिक' बनाया।

१९४२ में बापूजी के हाथ के सूत की जो साड़ी पहनकर अग्निदेव की आहुति बन जाने की अन्तिम इच्छा बा ने प्रकट की थी और मुझे सौंपी थी, वही साड़ी मैंने काँपते हाथों से उन्हें ओढ़ाया। क्या उन्हें उसी समय यह भविष्य दिख गया होगा कि यह साड़ी वे मेरे ही हाथों ओढ़ेंगी? क्या इसीलिये उन्होंने मुझे यह सौंपी होगी? लेडी प्रेमलीला बहन ठाकरसी ने गंगाजल में भिगोई हुई एक साड़ी भेजी थी। वह भी ओढ़ा दी गई।

संतोक काकी (मगनलाल गाँधी की पत्नी) ने वर्षों पुरानी सोने की पट्टी जड़ी हुई चूड़ियाँ और कंठी उतारी; कंठी नई पहनाई और चूड़ियों के बजाय बापू के हाथ-कते सूत के तार कलाई पर बांधी। इसके बाद वहाँ लिटा दिया जहाँ गोमूत्र से जगह पवित्र कर ली गई थी।

लाल किनारे की सफेद साड़ी पहनाकर, बालों में कंघी करके उनमें फूल गूँथे, कपाल पर चंदन और कुमकुम का लेप किया, पास में घी का दिया और अगरबत्ती रखी। बा के चेहरे पर ऐसा अपूर्व तेज चमक रहा था, मानो साक्षात् जगदम्बा हों।

कर्नल भंडारी ने आकर पूछा कि शव की क्रिया के लिये बापूजी की क्या इच्छा है? बापूजी ने कहा: या तो शव को उनके लड़कों और सम्बन्धियों को सौंप दिया जाय। ऐसा हो तो अग्नि-संस्कार में चाहे जितनी जनता भाग ले सकती है। सरकार जरा भी दखल नहीं दे सकती। यदि यहीं अग्नि-संस्कार किया जाय तो सगे-सम्बन्धियों को उपस्थित रहने की इजाजत मिलनी चाहिये। परन्तु यदि सरकार सगे-सम्बन्धियों को भी मना कर दे, तब तो हम जो छह आदमी यहाँ हैं वे ही इस क्रिया को निपटा लेंगे। अन्त में यह तय हुआ कि जेल में ही अग्नि-संस्कार हो और जो स्नेही व सन्बन्धी आयें उन्हें आने की इजाजत दी जाय।

इधर 'बा' के शव के पास वैष्णवजन के भजन से प्रार्थना शुरू की गई और गीता का पूरा पारायण किया गया। गीतापारायण के समय अठारह आदमी थे। बापूजी शव के पास ही सिर की तरफ सीधे तनकर आँखे बन्द किये बैठे थे। प्रार्थना लगभग रात के ग्यारह बजे पूरी हुई। साढ़े ग्यारह बजे खबर आई कि लगभग सौ आदमियों को सरकार महल में जाने देगी। बम्बई अलग-अलग टेलीफोन करने में खर्च होगा, इसलिये बापूजी ने केवल शामलदास काका को वन्दे मातरम् कार्यालय में खबर देने को कहा।

'बा' जब अन्तिम क्षण गिन रही थीं, तभी मैं थोड़ी देर रो ली। परन्तु चीजबस्त देने लेने और दूसरे कामों में यह भूल गई कि 'बा' नहीं है। वे ऐसी दिखाई देती थीं मानों सो ही रही हैं।

परन्तु पलंग पर सोई तब सचमुच यह खयाल हुआ कि नहीं, अब बा के पास सोने को नहीं मिलेगा। पिछले कई दिनों से मैं रात को लगभग बा के साथ ही सोती थी। आज अकेली रह गई। मेरे पास सुशीला बहन आईं। हम दोनों एक सी दुखी थीं। फिर भी उन्होंने मुझे खूब प्यार से समझाया। परन्तु कभी-कभी जब कोई अधिक आश्वासन देने आता है तब अधिक आघात लगता है। वैसा ही हुआ। सुशीला बहन और मैं एक दूसरे से लिपटकर रो रही थीं। दो-ढाई बजे बापूजी जागे। मुझे अपने पास बुलाया और बड़े प्रेम से भींचकर कहा: बा ने मेरे सामने तेरी बहुत बार सिफारिश की है। बा कहीं नहीं गई। तूँ यों रोयेगी तो तेरा मुझसे रोज गीता पढ़ना बेकार हो जायेगा। तुझसे बा को बड़ी आशा थी, तेरी माँ के बजाय बा मिली, और 'बा' के बदले अब मैं हूँ। मुझे याद नहीं कि बापू के पास मैं कब सो गई। ठीक चार बजे प्रार्थना के समय जगाया तभी उठी।

फाउण्डेशन की गतिविधियाँ

गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन व्याख्यानमाला

गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन महात्मा गाँधी के जीवन और कार्यों पर शोध कार्य में सतत् सन्नद्ध है। शोध को अद्यतन सूचनाओं से सम्पूरित करने हेतु फाउण्डेशन समय-समय पर व्याख्यानमालाओं तथा राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों का आयोजन करता रहता है। इसी क्रम में दि. ०४.०१.२०१४ को सैन फ्रांसिस्को स्टेट यूनिवर्सिटी, सैनफ्रांसिस्को के प्रसिद्ध गाँधी विचारक प्रोफेसर माइकल जे. लुनाइन का 'गाँधी ने कैसे और क्या सिखाया, भारत और विश्व: तब और अब' विषय पर एक व्याख्यान फाउण्डेशन के सभागार में आयोजित किया गया। प्रस्तुत है एक रिपोर्ट
- सम्पादक

व्याख्यान देते हुए प्रो. माइकल जे. लुनाइन तथा डायस पर अन्य विशिष्टजन

गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन महात्मा गाँधी के दर्शन और विचारों को जन-जन तक पहुंचाने के उद्देश्य से प्रतिवर्ष व्याख्यानमालाओं का आयोजन करता है। इस व्याख्यानमाला का पहला व्याख्यान सर्वोदय श्रमदान आन्दोलन के संस्थापक और अध्यक्ष श्रीलंका से पधारे डॉ. ए. टी. आर्यरत्ने द्वारा 'गाँधी-प्रेरणा और बौद्ध दर्शन' विषय पर हुआ। दूसरा व्याख्यान दिनांक १५ अगस्त २०१३ को मैनी यूनिवर्सिटी (अमेरिका) के प्रो. एलेन डगलस द्वारा 'महात्मा गाँधी के मूल्य और उनका महत्त्व' विषय पर तथा तीसरा व्याख्यान दिनांक २ अक्टूबर २०१३ को कैलीफोर्नियां यूनिवर्सिटी, बर्क्ले के प्रो. माइकल नॅग्लर द्वारा 'गाँधी और मानवता-संकट' विषय पर सम्पन्न हुआ।

इस शृंखला का चौथा व्याख्यान सैन फ्रांसिस्को स्टेट यूनिवर्सिटी, सैनफ्रांसिस्को के प्रसिद्ध गाँधी विचारक प्रोफेसर माइकल जे. लुनाइन द्वारा 'गाँधी ने कैसे और क्या सिखाया, भारत और विश्व: तब और अब' विषय पर गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन के प्रेक्षागृह में दिनांक ४ जनवरी २०१४ को आयोजित किया गया।

प्रो. माइकल लुनाइन ने अपने उद्बोधन में बताया कि महात्मा गाँधी ने समाज में फैली अहिंसा के उन्मूलन के लिये सत्याग्रह जैसा महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त हमें दिया। वे सत्य और अहिंसा को एक ही सिक्के के दो पहलू मानते थे। उनके अनुसार यह हिंसा एक महामारी है जिसका कारण भय, गरीबी और घृणा है तथा जिसका इलाज सत्याग्रहरूपी औषधि से ही किया जा सकता है। इस रूप में गाँधी एक नर्स थे, डाक्टर थे जिन्होंने हिंसा जैसे असाध्य रोग का इलाज अहिंसा और सत्याग्रह के माध्यम से बताया। महात्मा गाँधी ने साध्य और साधन की शुचिता पर अधिक बल दिया था। उनका मानना था कि यदि साधन शुद्ध नहीं है तो साध्य कभी भी शुद्ध या अच्छा नहीं हो सकता। सत्याग्रह अपने में परिवर्तन लाने का साधन है और साध्य उसका अहिंसा है। अहिंसा और सत्य एक दूसरे के बिना अधूरे हैं। प्रो. लुनाइन ने बताया कि गाँधीजी के दर्शन में ज्ञान, कर्म और भक्ति तीनों का समन्वय है इसलिए उनके दर्शन में समस्त समस्याओं का समाधान है। सर्वोदय के विषय में उनका मानना था कि जब तक समाज के अन्तिम व्यक्ति का विकास नहीं हो जाता उस स्वतन्त्रता या सर्वोदय का कोई अर्थ नहीं है।

प्रो. माइकल लुनाइन ने हाथ की पांच अंगुलियों के माध्यम से पांच कार्यों को सबके साथ मिलकर करने की आवश्यकता पर जोर दिया, जिनमें अस्पृश्यता-निवारण, सम्प्रदायवाद-निवारण, नारी का सशक्तीकरण तथा उचित सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक वर्ग की स्थापना और उत्थान समाहित है।

अपने अध्यक्षीय उदबोधन में बोलते हुए डॉ. भवरलाल जैन ने कहा कि महात्मा गाँधी ने भगवान बुद्ध के इस कथन को कि 'पाप से घृणा करो पापी से नहीं' को अपने जीवन के मूल मन्त्र के रूप में स्थान दिया। उनका मानना था कि मनुष्य और मनुष्य के कर्म दोनों दो चीजें हैं। मनुष्य ने किसी देश काल परिस्थिति में जो पाप किया वह उसका स्वभाव भी हो, यह आवश्यक नहीं है। महात्मा गाँधी के विषय में अक्सर यह मान लिया जाता है कि वे अंग्रेजों के विरुद्ध थे। वस्तुत: वह अंग्रेजों के विरुद्ध नहीं थे बल्कि अंग्रेजों की जो नीतियां थीं, अंग्रेज जो यहां कर रहे थे, वे उसके विरुद्ध थे। दक्षिण अफ्रीका में बोर युद्ध के दौरान उन्होंने अंग्रेजों की मदद की थी। यदि वह अंग्रेजों के विरुद्ध होते तो वहां उनकी मदद नहीं करते। इस सिद्धान्त को हमें अपने जीवन में उतारना चाहिये। डॉ. जैन ने युवा विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि विद्यालयों में अक्सर बच्चों के बीच संघर्ष होते रहते हैं। यदि तुम्हारा कोई साथी तुम्हें आकर एक थप्पड़ लगा देता है तो उससे पूछो कि आपने ऐसा क्यों किया? दुबारा यदि वह ऐसा करता है तो उससे पुन: पूछो कि आपने हमें हमारी किस गलती के लिये मारा है? तीसरी बार भी वह यदि ऐसा करता है तो उसका हाथ पकड़ लो और उससे कहो कि आज तो आपको कारण बताना ही पड़ेगा। इससे उस लड़के पर असर पड़ेगा और फिर वह दुबारा ऐसा नहीं करना चाहेगा, उसमें अपेक्षित सुधार आयेगा। पापी समझ कर यदि उसकी क्रिया के प्रति तुम अपनी प्रतिक्रिया दोगे तो यह कभी खत्म न होने वाला संघर्ष होगा। गाँधीजी ने अपने जीवन में यही किया। किसी भी क्रिया के आगे प्रतिक्रिया नहीं दी, यही उनका गुण उन्हें आगे ले गया। उनका मानना था कि आँख के बदले आँख की भावना से एक दिन सारा विश्व अन्धा हो जायेगा।

***

गाँधी अध्ययन केन्द्र समन्वयकों की कार्यशाला

दिनांक ६.०१.२०१४ को गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन के प्रेक्षागृह में गाँधी अध्ययन केन्द्रों के सभी समन्वयकों की दूसरी कार्यशाला आयोजित की गई। प्रथम कार्यशाला १२ अगस्त २०१३ को आयोजित की गई थी। जिसमें डॉ. टेरेसा जोसेफ, समन्वयक, सेन्टर फार गाँधियन स्टडीज़, अल्फान्सा कालेज, पाला (केरल) के अतिरिक्त ३३ प्रतिभागियों ने भाग लिया था। इस कार्यशाला में गाँधी अध्ययन केन्द्रों के लिये कोर्स मॉडल कैसा हो, इसपर चर्चा कर केन्द्रों के लिये कोर्स मॉडल तैयार किया गया था। दूसरी कार्यशाला में प्रथम कार्यशाला में प्रतिपाद्य निष्कर्षों के आधार

गाँधी अध्ययन केन्द्र के समन्वयकगण प्रो. माइकल लुनाइन के साथ

पर उसमें क्या कुछ नया किया जा सकता है, इसपर गंभीर चर्चा हुई। गाँधी अध्ययन केन्द्रों का मुख्य उद्देश्य छात्रों के लिए नित अभिनव एवं जीवनोपयोगी कार्यक्रम बनाना तथा उन्हें क्रियान्वित करना है। कार्यशाला में एम. जे. कॉलेज तथा अन्य कॉलेजों के समन्वयकों ने सक्रिय रूप से सहभाग लिया। इस कार्यशाला में विशिष्ट अतिथि थे सैन फ्रांसिस्को स्टेट यूनिवर्सिटी, सैनफ्रांसिस्को के प्रो. माइकल लुनाइन। कार्यशाला में गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन के डीन प्रो. एम. पी. मथाई तथा श्री सतीश मोरे ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

♦♦♦

वाशिम – ग्रन्थोत्सव समारोह

गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन महात्मा गाँधी के विचारों के प्रचार-प्रसार तथा गाँधी साहित्य को जन-जन तक पहुंचाने के लिये कटिबद्ध है। वाशिम जिला सूचना कार्यालय ने महाराष्ट्र राज्य साहित्य संस्कृति मंडल के सहयोग से दि.२०,२१,२२ जनवरी २०१४ को एक ग्रन्थोत्सव समारोह का आयोजन किया। सावित्रीबाई फुले महिला महाविद्यालय के भव्य प्रांगण में प्रारम्भ हुये इस कार्यक्रम का उद्घाटन मा. आर. सी. कुलकर्णी, जिलाधिकारी, वाशिम तथा श्री युवराज पाटील, जिला सूचना अधिकारी के हाथों हुआ। इस तीन दिनों के कार्यक्रम के दौरान ग्रंथ प्रदर्शनी तथा पुस्तक विक्रय के स्टॉल लगाये गये जिसमें ग्रंथप्रेमी नागरिक तथा छात्र अधिक संख्या में उपस्थित थे। प्रदर्शनी में गांधी रिसर्च फाउण्डेशन ने भी अपने प्रकाशनों तथा अन्य गांधी साहित्य का प्रदर्शन किया। फाउण्डेशन की ओर से सर्वश्री भुजंगराव बोबडे, संतोष भिंताडे तथा सूरज विसपुते आदि ने अपना सक्रिय सहयोग दिया। करीब १० से १२ हजार छात्र तथा नागरिकों ने इस ग्रंथोत्सव का लाभ उठाया।

♦♦♦

'मोहन से महात्मा' प्रदर्शनी तथा साहित्य समारोह

२६ जनवरी २०१४, गणतन्त्र दिवस के अवसर पर मा. दीनानाथ मंगेशकर महाविद्यालय, औराद शहाजनी, जि. लातूर में 'मोहन से महात्मा' चित्रप्रदर्शनी तथा साहित्य और खादी बिक्री समारोह का आयोजन किया गया। प्रदर्शनी का उद्घाटन श्री वलांडे गुरुजी ने महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. ए. आर. गोहरवार तथा अन्य विशिष्टजनों की उपस्थिति में किया। इस कार्यक्रम का लाभ लगभग ३-४ हजार छात्रों तथा नागरिकों ने लिया। गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन की ओर से सर्वश्री संतोष भिंताडे तथा श्री सूरज विसपुते ने संस्था का प्रतिनिधित्व किया। इस अवसर पर ११,८०८ रुपयों की खादी तथा पुस्तकों की बिक्री हुई।

♦♦♦

गांधी रिसर्च को पंचतारांकित नामांकन मिला

सम्पूर्ण भारत का ध्यान अपनी तरफ आकर्षित करने वाले गांधी रिसर्च फाउण्डेशन के वास्तु को आदर्श ग्रिहा (ग्रीन रेटिंग फार इन्टीग्रेटेड हैबिटेट एसेसमेन्ट) एवं टेरी (द एनर्जी एण्ड रिसोर्स इन्स्टीट्यूट) नवीन एवं अक्षय ऊर्जा स्रोत मन्त्रालय (एमएनआरआई) के सहयोग से नई दिल्ली के इंडिया इनहैबिटेट सेन्टर में सम्पन्न हुए 'ग्रिहा शिखर सम्मेलन २०१४' (१६-१८ जनवरी २०१४) में पंचतारांकित नामांकन किया गया है। गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन का भवन निर्माण जैन इरिगेशन सिस्टम्स के सिविल विभाग द्वारा किया गया है। यह नामांकन जैन इरिगेशन सिविल विभाग के सहकारी श्री प्रशांत पटेल ने आसाम के मुख्यमंत्री श्री तरुण गोगोई, टेरी के महासंचालक डॉ. आर. के. पचौरी तथा नवीन एवं अक्षय ऊर्जा स्रोत मन्त्रालय के सचिव डॉ. सतीश अग्निहोत्री के हाथों स्वीकृत किया। उक्त सम्मेलन में ४२५ संस्थाओं ने नामांकन हेतु अपने वास्तु की प्रविष्टि की थी। गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन का वास्तु इस दृष्टि से विशेष है कि कुल ६५ हजार वर्गफीट पर कम से कम ऊर्जा संसाधनों का इस्तेमाल कर इसका वास्तु निर्माण हुआ है। वास्तु निर्माण के समय ४५० बड़े वृक्षों को बचाते हुए, बहुत से नये पौधों को लगाया गया। निर्माण में अधिक से अधिक रफ कोटा पत्थर, मिट्टी के ईंटों की जगह प्लायएश से तैयार की गयी ईंटों तथा सीमेन्ट की जगह चूना का इस्तेमाल किया गया है। सिर्फ स्लैब में ही सीमेन्ट का उपयोग किया गया है। ऊर्जासंवर्धन हेतु सौरतन्त्रज्ञान का उपयोग करते

पुरस्कार देते हुए आसाम के मुख्यमंत्री तरुण गोगाई, टेरी के महासंचालक डॉ. आर. के. पचौरी, डॉ. सतीश अग्निहोत्री तथा स्वीकार करते हुए प्रशांत पटेल.

हुए पानी के इस्तेमाल में प्रारम्भ से ही बचत का दृष्टिकोण अपनाया गया है। इसके अतिरिक्त खुली हवा तथा नैसर्गिक प्रकाश को प्रमुखता देते हुए जोधपुरी लाल पत्थरों का उपयोग किया गया है। उल्लेखनीय है कि गांधी रिसर्च फाउण्डेशन के वास्तु को कम से कम ऊर्जा संसाधनों का उपयोग करते हुए निर्माण करने हेतु सन् २०१२ ग्रिहा एवार्ड प्राप्त हुआ था।

♦♦♦

ग्रामीण आरोग्य और पर्यावरण जागृति पदयात्रा

महात्मा गाँधी के ग्रामस्वराज के स्वप्नों के अनुरूप गाँवों के विकास और ग्रामीणों को स्वास्थ्य, पर्यावरण और आरोग्य के प्रति जागरूक करने के उद्देश्य से गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन प्रतिवर्ष महात्मा गाँधी की पुण्यतिथि ३० जनवरी को ग्रामीण पदयात्रा का आयोजन करता है। अब तक फाउण्डेशन कुल चार पदयात्राएँ आयोजित कर चुका है। सभी पदयात्राओं को अपार जन समर्थन मिला है।

हरी झंडी दिखाकर पदयात्रा का शुभारम्भ करते हुए श्री दलुभाऊ जैन

इसी क्रम में दिनांक ३० जनवरी २०१४ को चौथी ग्रामीण आरोग्य और पर्यावरण जागृति पदयात्रा का आयोजन किया गया। पदयात्रा का उद्घाटन सेवादास श्री दलूभाऊ जैन और झुंबरलाल शर्मा ने सर्वधर्म प्रार्थना के पश्चात् हरी झंडी दिखाकर किया। यह पदयात्रा गाँधी उद्यान, जलगाँव से प्रारम्भ हुई जो देवगांव, खर्डी, वरगव्हाण, कुड्यांपाणी, बिडगांव, मोहरद और आडगांव होते हुए वाघझिरा में समाप्त हुई। इस पदयात्रा में कुल ७८ किलोमीटर की दूरी तय की गयी।

पदयात्रा के सभी पड़ाव वाले गाँवों में ग्रामफेरी, विद्यालय सभा, विद्यार्थियों के कार्यक्रम, ग्रामस्वच्छता, वृक्षारोपण, मोहन से महात्मा चित्र प्रदर्शनी आदि कार्यक्रमों के माध्यम से ग्रामीणों को आरोग्य पर्यावरण और स्वास्थ्य के प्रति जागरूक किया गया। पदयात्रियों ने स्थान-स्थान पर सौरऊर्जा से चलित चरखे और पेटी चरखे का प्रदर्शन किया। कई गाँवों में पथनाट्य (नुक्कड़ नाटक) के माध्यम से ग्रामीणों को जागरूक किया गया। 'आइ ऐम कलाम' नामक एक फिल्म ग्रामीणों को दिखाई गयी जिसकी सभी ग्रामीणों ने मुक्तकंठ से सराहना की। पदयात्रा के पूर्व निश्चित कार्यक्रम के अनुरूप १-२ फरवरी को वरगव्हाण, ३-४ फरवरी को कुंड्यापाणी, ५-६ फरवरी को बिडगांव, ७-८ फरवरी को मोहरद, ९ फरवरी को आडगांव तथा १०-११ फरवरी को वाघझिरा गाँव में विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए। इस पदयात्रा में लगभग ४००० विद्यार्थी तथा ५००० ग्रामीणों ने अपना सहभाग दिया। ५५ पदयात्री पूरे समय तक सक्रिय रूप से कार्य करते रहे।

पदयात्रा में सर्वश्री फारूक शेख, जावले नाना, महानोर दादा, इब्राहिम तडवी, एनसीसी के कर्नल पी.विठ्ठल आदि का उल्लेखनीय सहयोग रहा।

♦♦♦

सलाहकार समिति की दूसरी बैठक सम्पन्न

दिनांक २ फरवरी २०१४ को गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन की सलाहकार समिति की दूसरी बैठक कान्ताई सभागार में हुई। इस बैठक में जो पदाधिकारीगण उपस्थित थे उनमें मुख्य थे सर्वश्री डॉ. सुदर्शन आय्यंगर, डॉ. भवरलाल जैन, सुश्री नीलिमा मिश्रा, श्री दलूभाऊ जैन एवं श्री अशोक जैन। बैठक में पूर्व बैठक के कार्य-विवरण पर सदस्यों ने अपनी सहमति जताई। बैठक में 'खोज गाँधीजी की' संग्रहालय तथा गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन द्वारा प्रारम्भ किये गये कुछ पाठ्यक्रमों पर चर्चा की गई। सदस्यों ने कान्ताई ग्राम समृद्धि योजना को कार्यरूप देने की अपनी संस्तुति दी। सदस्यों ने बहन नीलिमा के साथ बहादरपूर जाकर वहां के किसानों, युवाओं और महिलाओं द्वारा बचतगटों के सन्दर्भ में उनके प्रस्तुतीकरण का अवलोकन किया जिसमें सभी बचतगटों ने अपने द्वारा किये जा रहे कार्यों

सलाहकार समिति की बैठक करते सदस्यगण

का सम्पूर्ण व्यौरा प्रस्तुत किया। सदस्यों ने योजना को सुचारु रूप से चलाने के लिये दिये गये सुझावों पर भी विचार-विमर्श किया।

♦♦♦

कांताई ग्रामसमृद्धि योजना का शुभारम्भ

महिला बचतघटों को चेक प्रदान करते हुए डॉ. भवरलाल जैन

२ फरवरी २०१४ को कान्ताई सभागार में गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन, जैन इरिगेशन सिस्टम्स तथा भवरलाल एवं कांताबाई जैन बहुउद्देशीय प्रतिष्ठान के संयुक्त तत्त्वावधान में ग्रामीण विकास हेतु कान्ताई ग्रामसमृद्धि योजना का विधिवत शुभारम्भ किया गया। इस योजना के तहत ग्राम समृद्धि के विभिन्न कार्यक्रम शिक्षा के साथ जोड़कर आयोजित किये जा रहे हैं। ऐसे ही एक कार्यक्रम के तहत महिला बचतगटों के माध्यम से उन्हें स्वावलम्बी बनाने हेतु गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन ने टाकरखेड़ा गांव को प्रयोग के तौर पर लिया है। कांताई ग्रामसमृद्धि योजना के अंतर्गत चलने वाली इस योजना को दी जानेवाली आर्थिक सहायता के सन्दर्भ में प्रो. सुदर्शन आय्यंगर ने विस्तार से प्रकाश डाला। इस योजना का प्रारम्भ महिला बचतगटों को चेक देकर किया गया। इस क्रम में दस बचतगटों को कुल ६,४०,००० रुपये की आर्थिक सहायता दी गई। इस दी गई आर्थिक मदद को ससमय वापस लौटाने का बचन देकर बचतगटों ने अपने स्वावलंबन का आधार व्यक्त किया।

इस अवसर पर गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन के संस्थापक डॉ. भवरलाल जैन, मैगसेसे पुरस्कार विजेता बहन नीलिमा मिश्रा, सेवादास दलुभाऊ जैन, डॉ. सुदर्शन आय्यंगर, डॉ. वी. के. पाटिल आदि महानुभावों के अतिरिक्त भारी संख्या में युवक और नागरिक उपस्थित थे।

♦♦♦

डॉ. अनिल काकोडकर का व्याख्यान

दि. २ फरवरी २०१४ को गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन द्वारा कांताई सभागार, जलगाँव में भाभा एटोमिक रिसर्च इन्स्टीट्यूट के प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. अनिल काकोडकर का 'ग्राम विकास की कुछ संकल्पनायें' विषय पर एक व्याख्यान आयोजित किया गया।

'ग्राम विकास की कुछ संकल्पनायें' विषयक व्याख्यान के पूर्व दीप प्रज्वलन कर कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए डॉ. अनिल काकोडकर

अपने व्याख्यान में डॉ. अनिल काकोडकर ने बताया कि महात्मा गाँधीजी का इस देश की संस्कृति के गौरव को बनाये रखने में बहुत बड़ा योगदान है। सूतकताई से लेकर गोसेवा और नई तालीम के माध्यम से उन्होंने ग्रामोत्थान की एक सुन्दर संकल्पना की थी। उस समय उन्होंने इस सन्दर्भ में ग्रामस्वराज जैसे अनेक महत्त्वपूर्ण विचार भी दिये थे जो आज लगभग ६५ वर्ष बाद भी उतने ही प्रासंगिक हैं।

शैक्षणिक क्षेत्र में आज अनेक प्रकार के प्रयोग किये जा रहे हैं। किन्तु आज की शिक्षा व्यवसायात्मक तथा प्रक्रियात्मक अधिक हो गयी है। चरित्र निर्माण और संस्कार प्रदान के संकल्प से अधिकतर दूर होने के कारण आज की शिक्षा प्राय: खोखली प्रतीत हो रही है। यह अत्यन्त घातक स्थिति है। ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थी भटक रहे हैं, उन्हें क्या करना चाहिये, यह समझ नहीं पा रहे हैं। आज विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में शोध पर आधारित शिक्षा की आवश्यकता है। डॉ. काकोडकर ने कहा कि महात्मा गाँधी के विचाररूप संस्कार मुझे मेरे मां बाप से मिले इस लिये मैं आज अणु उर्जा क्षेत्र का वैज्ञानिक होते हुए भी गांव से जुड़ा हुआ हूं। डॉ. काकोडकर ने एटोमिक रिसर्च सेन्टर की तरफ से चलाये जा रहे एक 'आकृति' नामक कार्यक्रम का उल्लेख किया जो किसानों और गावों की समस्याओं से जुड़ा है। उन्होंने कहा कि तेजी से बढ़ रहे नगरीकरण को रोकने के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक से अधिक ज्ञानकेन्द्र या विद्यालय खोलने की जरूरत है। इससे न केवल ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार बढ़ेगा बल्कि ग्रामीणों को भी बहुत कुछ नया सीखने का मौका मिलेगा। शहर में मिलने वाली सुविधायें यदि गांवों में मिलने लगीं तो गांव से लोगों का पलायन रुकेगा। उन्होंने कहा कि आज वक्त जैसे-जैसे बढ़ रहा है, नित नये शोधों को आज के विद्यार्थियों तक पहुंचाने की आवश्यकता है ताकि ग्रामीण छात्र या युवक भी उन जानकारियों से लाभ उठा सकें।

♦♦♦

गाँधी तीर्थ को 'आयका' का प्रथम पुरस्कार

रिफाय आर्टिसन्स एन्ड प्रा. लि. (पूना) और रचना सांसद आर्कीटेक्चर अकादमी, बम्बई की और से पूना में आयोजित आर्टिस्ट इन काँक्रीट एवॉर्ड एशिया फीस्ट २०१३-१४ में गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन (जलगाँव) के संग्रहालय को स्थापत्य और कला के लिये प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया। गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन के संचालक अशोक जैन को यह पुरस्कार

प्रसिद्ध वास्तुविद् प्रो. जोहानी पलास्मा और जो नॉयरो से पुरस्कार लेते हुए गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन के संचालक अशोक जैन

विश्व प्रसिद्ध वास्तुविद् प्रो. जोहानी पलास्मा और जो नॉयरो के द्वारा दिया गया। इस फीस्ट में दुनियांभर के प्रसिद्ध वास्तुविद्, इंटीरियर डिजाइनर, लैंडस्केप डिजाइनर, कन्स्ट्रक्शन कम्पनिओं ने हिस्सा लिया था।

विश्वभर से आये अलग-अलग स्पर्धकों के कलाकृतिओं का परीक्षण विश्व स्तर के वास्तुविद् तथा रचना सांसद आर्किटेक्चर (मुंबई) शिक्षा संस्था के द्वारा किया गया। गाँधी तीर्थ स्थित 'खोज गाँधी की' संग्रहालय के वास्तु को सिविक और कम्युनिटी बिग कन्स्ट्रक्शन के अन्तर्गत प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ।

♦♦♦

'बा' की पुण्यतिथि मनाई गयी

बा के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए फाउण्डेशन के सदस्यगण

दिनांक २२ फरवरी २०१४ को 'बा' की पुण्यतिथि के अवसर पर गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन के सदस्यों द्वारा उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की गयी। इस अवसर पर प्रार्थना सभा में वक्ताओं ने कस्तूरबा गाँधी के जीवन से जुड़े कतिपय प्रेरक प्रसंगों तथा संस्मरणों को सुनाते हुए 'बा' के महात्मा गाँधी के प्रति प्रेम और समर्पण को याद किया।

♦♦♦

मि. फर्नान्डो फरेरा रिवेरो का विशेष व्याख्यान

व्याख्यान देते हुए मि. फर्नान्डो फरेरा रिवेरो

गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन स्टूडेन्ट फोरम व्याख्यानमाला के अन्तर्गत फाउण्डेशन के सभागार में दिनांक २५ फरवरी २०१४ को मि. फर्नान्डो फरेरा रिवेरो का 'अहिंसा और युवा चुनौतियां: मैक्सिकन अनुभव' पर एक विशेष व्याख्यान आयोजित किया गया। मि. फर्नान्डो फरेरा रिवेरो (मैक्सिको) १९४४ में भारतीय संस्कृति को समझने के उद्देश्य से भारत आये। वे महात्मा गाँधी के दर्शन से बहुत प्रभावित हुए और एक वर्ष तक सेवाग्राम, वर्धा जैसे गाँधी संस्थानों में व्यतीत किया। वापस मैक्सिको जाने के बाद वे गाँधी विचारों से प्रभावित होकर सामाजिक कार्यों से जुड़ गये।

२०१० में मि. फर्नान्डो फरेरा रिवेरो ने मैक्सिको में मेसा डीपाज नामक एक एनजीओ के माध्यम से एक सक्रिय युवा आन्दोलन '१@ पाज' अर्थात् 'शान्ति के लिये एक से एक' आन्दोलन प्रारम्भ किया। उन्होंने हिंसा से जल रहे न्यूओलियोन (मैक्सिको) के विषय में बताया कि किस तरह से वहां का दिग्भ्रमित अतिवादी युवाओं का एक वर्ग लोगों की हत्या और लूट-पाट कर रहा है और किस तरह हम उनकी हिंसा का जवाब अहिंसा और प्रेम से दे रहे हैं। हिंसक लोग वहां 'गैंग' कहे जाते हैं। हम उन्हें बदलना चाहते हैं, उनकी शक्ति को अच्छे कार्यों में लगाना चाहते हैं। उन्होंने बताया कि हमारी कार्यप्रणाली के मुख्य रूप से तीन नियम हैं- (१) अहिंसा का नियम दृढ़ता पूर्वक लागू करना, बीच का कोई रास्ता नहीं अपनाना, (२) एक से एक को जोड़कर लोगों को बदलने का प्रयास करना तथा (३) स्वदेशी का सिद्धान्त- अर्थात् हमारी अलग पहचान है, अस्मिता है और उस पर हमें गर्व है। उन्होंने बताया कि कुछ वर्ष पूर्व प्रो. एम. पी. मथाई मैक्सिको गये थे। उन्होंने न्यूओलियोन के कुछ हिंसाग्रस्त इलाकों का दौरा किया और बताया कि लोगों को परिवर्तित करने के लिये सबसे पहला कार्य अलग-थलग पड़े लोगों को जोड़ना है, उन्हें इकट्ठा कर उनकी शक्ति को बढ़ाना है। उसके बाद छोटे-छोटे समूहों में लोगों तक जायें और उनका मन परिवर्तन करने की कोशिश करें। आज हम उन्हीं की प्रेरणा के अनुरूप काम कर रहे हैं। हमनें उन लोगों को भी अपने समूहों में शामिल किया है जो कभी गैंग से जुड़े थे, व्यसन से जुड़े थे, हिंसा से जुड़े थे, लेकिन आज वह हमारे साथ रचनात्मक कार्य कर रहे हैं। हमारे शहर में १७००० गैंग मेम्बर्स हैं। इन गैंग मेम्बर्स को मुख्य धारा में लाने के लिये हम ३० कार्यकर्ता कार्टून्स और प्रकाशित पैम्फलेट्स के माध्यम से उन्हें शिक्षित और जागरूक कर रहे हैं। कभी-कभी गैंग मेम्बर्स से सम्पर्क करना खतरनाक होता है, पर हम लुइस ओन्टोनिओ वाजिक्यू, रायस मारिलू, रोडरिगो रिवेरो, कन्सेलो, मिस पाउला पालोमाल जैसे लोगों के साथ जेलों में तथा अस्पतालों में जाकर एवं मादक दवाओं का कारोबार करनेवालों के अड्डों पर जाकर उनका हृदय परिवर्तन करने की कोशिश कर रहे हैं। आशा है कि बहुत शीघ्र हम संघर्ष के रास्ते पर चल रहे लोगों को मुख्य धारा से जोड़ पायेंगे। मि. फर्नान्डो ने हिंसक प्रवृत्तियों के मूल में उन्हें मिलने वाले प्रेम और सद्भाव से वंचित होना बताया।

अपने समापन-वक्तव्य में डॉ. भवरलाल जैन ने बताया कि समाज में हिंसा पनपने के बहुत सारे कारण होते हैं। किन्तु हिंसा का जवाब हिंसा से नहीं दिया जा सकता। आंख के बदले आंख से एक दिन सारी दुनियां अंधी हो जायेगी। इसलिये हिंसा पर तो अहिंसा और प्रेम से ही विजय पाई जा सकती है जिसकी मिशाल गांधीजी ने अपने असहयोग आन्दोलन और उनके द्वारा किये गये अनेक व्यावहारिक कार्यों के आधार पर दी।

♦♦♦

'प्रोफाइल्स ऑफ गाँधी' का लोकार्पण समारोह

'प्रोफाइल्स ऑफ गाँधी' का लोकार्पण करते हुए डॉ. रघुनाथ माशेलकर

रयत शिक्षण संस्था, सातारा तथा होमी भाभा एटोमिक रिसर्च सेंटर के संयुक्त तत्त्वावधान में द्वितीय रयत विज्ञान परिषद् का आयोजन २८ फरवरी २०१४ को रावसाहेब नारायणराव बोरावके महाविद्यालय, श्रीरामपूर, जि. अहमदनगर में किया गया। इस अवसर पर गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन की ओर से 'प्रोफाइल्स ऑफ गाँधी' पुस्तक का लोकार्पण प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. रघुनाथ माशेलकर तथा रयत शिक्षण संस्था के चेयरमैन श्री रावसाहेब शिंदे के द्वारा किया गया। श्री रावसाहेब शिंदे ने जनसभा को इस ग्रंथ की विशेषता और प्रकाशन की आवश्यकता के बारे में बताया।

गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन द्वारा प्रतिवर्ष आयोजित की जानेवाली गाँधी विचार संस्कार परीक्षा में अधिक से अधिक छात्रों को सम्मिलित करने हेतु प्रेरित करनेवाले रयत शिक्षण संस्था के प्रतिनिधि श्री रावसाहेब शिंदे का गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन के सलाहकार समिति के सदस्य डॉ. रघुनाथ माशेलकर ने सम्मानपत्र और गाँधी स्मृतिचिह्न देकर सम्मान किया। फाउण्डेशन के श्री भुजंगराव बोबडे ने इन परीक्षाओं की आवश्यकता और गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन की प्रतिबद्धता के विषय में सभा को बताया।

इस समारोह में लगभग ७०० अध्यापकगण तथा १५,००० छात्र-छात्राओं ने भाग लिया। इस अवसर पर सर्वश्री राम भोगले, अध्यक्ष, महाराष्ट्र चेंबर्स ऑफ कॉमर्स एसोसिएशन तथा प्राचार्य डॉ. ज्ञानेश्वर म्हस्के की उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

♦♦♦

गाँधीजी द्वारा प्रयुक्त वस्तुएँ दान में मिलीं

श्रीमती गीता धर्मराज मेहता द्वारा फाउण्डेशन को दान में दी गई वस्तुओं के साथ डॉ. भवरलाल जैन, श्री अशोक जैन तथा फाउण्डेशन के पदाधिकारीगण

८ मार्च २०१४ को राजकोट (गुजरात) से सपरिवार पधारीं महात्मा गांधी के बड़े भतीजे कनु गांधी की पुत्री श्रीमती गीता धर्मराज मेहता ने 'खोज गांधी की' संग्रहालय के लिये महात्मा गांधी द्वारा प्रयोग में लाई गयीं कुछ बहुमूल्य वस्तुएं दान में दीं। कुल ५१ वस्तुएं जो उन्होंने संग्रहालय को दीं उनमें मुख्य हैं- २२ कपड़े तथा २९ लिफाफे, कार्ड्स आदि। कपड़ों में ६ सूती हाथ-रुमाल, ४ नैपकिन्स, ४ पट्टे (गांधीजी द्वारा निसर्गोपचार के लिये प्रयोग में लाये हुए), २ गमछे, १ सादा कपड़ा, ३ चादरें, १ किनारीदार धोती तथा १ कढ़ाईवाला गलीचा है। सभी २९ लिफाफे तथा कार्ड्स ओरिजनल हैं।

ये वस्तुएं फाउण्डेशन को देते समय श्रीमती मेहता काफी भावुक हो गयी थीं। उन्होंने कहा कि, ''ये वस्तुएं गांधीजी की स्मृति से जुड़ी हैं, इन्हें अलग करते समय दु:ख होता है किन्तु संतोष और हर्ष भी होता है जब हम इन वस्तुओं को गांधी रिसर्च फाउण्डेशन जैसी सुपात्र संस्थाओं को देते हैं।''

श्रीमती मेहता के दामाद श्री भावेश शाह ने कहा कि, ''जिस रूप में गीताबेन स्व. कनु और आभा गांधी से जुड़ी थीं, उस रूप में मैं तो नहीं जुड़ा हूं, किन्तु मैंने अनुभव किया गांधीजी की जो भी चीजें कहीं पर भी बिकती हैं, तो यह कहा जाता है कि गीता बेन ने बेचा है। यह वस्तुयें यहां देकर हम ऐसे लोगों को बताना चाहते हैं कि न ही हमने गांधी जी की किसी चीज को कभी बेचा है, न बेचना चाहते हैं और न भविष्य में बेचेंगे। गांधी रिसर्च फाउण्डेशन द्वारा गांधी विचार के प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में किये जा रहे उल्लेखनीय कार्य को दृष्टिगत रखते हुए, हमनें गांधीजी की इन वस्तुओं को फाउण्डेशन के सक्षम हाथों में सोंपने का निश्चय किया।

इस अवसर पर गांधी रिसर्च फाउण्डेशन के संस्थापक डॉ. भवरलाल जैन ने कहा कि, ''हम श्रीमती मेहता के आभारी हैं कि उन्होंने गांधीजी की इन बहुमूल्य वस्तुओं को हमें दिया। उन्होंने गीता बेन और उनके परिवार को इस बात का आश्वासन दिया कि फाउण्डेशन इन वस्तुओं का समुचित संरक्षण और प्रदर्शन करेगा। उन्होंने आगे कहा कि, ''आपने मुझपर एक बड़ी जिम्मेदारी सौपी है, जिसे मुझे निभाना है। इसीलिये इस अवसर पर हमनें अपनी तीनों पीढ़ियों (पुत्र अशोक जैन एवं पौत्र अथांग जैन) को यहां बुलाया है ताकि मेरे बाद इस विरासत को ये लोग संभाल सकें। मैं समझता हूं कि ये सारी चीजें अनमोल हैं और जो इसका मोल करता है वह मनुष्य की श्रेणी में नहीं है। गांधीजी की वस्तुओं का मोल करना अच्छी बात नहीं है और यह गांधीजी के विचारों के खिलाफ है। उनकी वस्तुओं को बेचने वाले लोग पहले अपनेआप को बेचते हैं।'' एक लिखित सहमति-पत्र, फाउण्डेशन और श्रीमती मेहता के बीच तैयार किया गया जिसपर फाउण्डेशन की ओर से श्री अशोक जैन, तथा स्वयं श्रीमती गीता धर्मराज मेहता ने हस्ताक्षर कर आपस में सहमति पत्र का आदान-प्रदान किया।

उल्लेखनीय है कि गांधी रिसर्च फाउण्डेशन को महात्मा गांधी से जुड़ी वस्तुओं के दान में प्राप्त होने का क्रम जारी है। संग्रहालय हेतु अब तक जलगांव सर्वसेवा समिति द्वारा प्राप्त फैजपुर अधिवेशन में गांधीजी द्वारा प्रयुक्त सामग्री जैसे उन्हें सम्मानित किए जाने के समय पहनाई गई सूत की माला, चप्पलें, पादुका, वह विशेष पत्थर जिसे गांधीजी स्नान के समय प्रयोग करते थे तथा पंचगिनी से गांधीजी द्वारा प्रयोग में लाया गया नैसर्गिक उपचार में प्रयुक्त बाथटब तथा अन्य सामग्रियां प्राप्त हुई हैं। इसके अतिरिक्त कई संस्थाओं और व्यक्तियों से गाँधीजी द्वारा प्रयोग में लाये गये कुछ पत्र, पुस्तकें, फोटोग्राफ्स तथा डाक्यूमेन्ट्स भी प्राप्त हुए हैं। गांधी रिसर्च फाउण्डेशन इन सभी दानदाताओं के प्रति आभार ज्ञापित करता है।

♦♦♦

शान्ति सद्भावना यात्रादल गाँधी तीर्थ में

सद्भावना यात्रा दल के साथ डॉ भवरलाल जैन, शुगन बरंठ एवं चंदन दा

सर्व सेवा संघ, गुजरात विद्यापीठ और गाँधी पीस फाउण्डेशन के संयुक्त तत्त्वावधान में निकाली गई शान्ति सद्भावना यात्रा का ४० सदस्यीय दल गाँधी तीर्थ में २० मार्च २०१४ को पहुँचा। यह सद्भावना यात्रा १७ मार्च २०१४ को कोकराझार से प्रारम्भ होकर कोलकत्ता - जलगाँव - बारडोली - दांडी - अहमदाबाद - पोरबन्दर - दिल्ली होते हुए ३१ मार्च २०१४ को वापस कोकराझार पहुँचेगी। यह सद्भावना यात्रा १९ जुलाई २०१२ को कोकराझार में बोडो उग्रवादियों और मुसलमानों के बीच हुए भीषण दंगे से उत्पन्न कटुता को समाप्त करने के उद्देश्य से निकाली गई है। इस सद्भावना यात्रा का नेतृत्व करनेवालों में प्रमुख थे -ज्येष्ठ गाँधीवादी श्री शुगन बरंठ, चंदन दा, नटसूर्याजी तथा डॉ. धर्मेन्द्र। गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन ने सद्भावना यात्रा में शामिल सभी व्यक्तियों का एक सादे समारोह में स्वागत किया। इस अवसर पर दंगों की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए चंदन दा ने कहा कि असम के बीटीएडी में हिंसाग्रस्त चिरांग, दुगुडी, कोकराझार आदि चार जिले आते हैं जहाँ २०१२ में भीषण दंगे हुए। दंगों को रोकने के उद्देश्य से गाँधी विचारधारा को माननेवाले लोगों का एक १६ सदस्यीय दल हिंसा ग्रस्त चारों जिलों का दौरा किया। इस यात्रा में हमारे साथ जो ४० बच्चे हैं, वे उन्हीं हिंसा प्रभावित जिलों से हैं। उन्होंने बहुत नजदीक से अपने को अनाथ होते हुए देखा है। वे अपने अनुभवों को लोगों के साथ बाँटकर उनके बीच शान्ति और सद्भावना का सन्देश दे रहे हैं।

♦♦♦

अतिथि देवो भव!

महात्मा गाँधी के जीवन एवं उनके कार्यों को गाँधी रिसर्च फाउण्डेशन स्थित 'खोज गाँधी की' संग्रहालय में अत्याधुनिक तकनीक के साथ समन्वित करके युवाओं के लिए कैसे उपयोगी बनाया गया है? इसे देखने व समझने के लिए अतिथियों का स्वाभाविक प्रवाह होता रहता है। अतिथि हमारे लिये देवतुल्य हैं।

प्रो. माइकल लुनाइन एवं श्रीमती के. लुनाइन, यूएसए
दि. ०३.०१.२०१४

मंगला खाडीलकर, वृत्त निवेदिता, मुम्बई
दि. ०५.०१.२०१४

गाँधी अध्ययन केन्द्रों के समन्वयकों की दूसरी कार्यशाला, जलगाँव. दि. ०६.०१.२०१४

व्हि. एस. गर्ल्स् हाईस्कूल, दोंडाईचा
दि. २४.०१.२०१४

शीतल महाजन, पूना
दि. ३१.०१.२०१४

चांडक कन्या विद्यालय, सिन्नर, नासिक
दि. ०२/०२/२०१४

आरती कदम, चतुरंग, सम्पादिका, लोकसत्ता, मुम्बई
संदीप केदारे, लोकसत्ता, जलगाँव, दि. ११.०२.२०१४

प्रतापराव पवार, पूना
दि. १५.०२.२०१४

पोपटराव पवार, हिवरेबजार
दि. १६.०२.२०१४

एमटीडीसी के संयुक्त प्रबन्धक निदेशक सतीश सोनी
दि. २०.०२.२०१४

फर्नान्डो फरेरा रिवेरो, मॅक्सिको
दि. २५.०२.२०१४

प्रवीण सालुंखे, आइ.पी.एस., नासिक
दि. २८.०२.२०१४

तमिलनाडु गाँधियन और अब्दुल भाई, तमिलनाडु
दि. ०२.०३.२०१४

प्रो. डॉ. गीता धर्मपाल (जर्मनी) तथा प्रो. मोरवंचीकर
दि. ०७.०३.२०१४

शितल उगले, सीईओ, जिलापरिषद्, जलगाँव,
दि. ०९.०३.२०१४

रावसाहेब शिंदे, राम भोंगले अन्य विशिष्टजन, श्रीरामपूर
दि. ०९.०३.२०१४

'शान्ति सद्भावना यात्रादल' कोकराझार (आसाम) फाउण्डेशन के सहकारियों के साथ दि. २०.०३.२०१४

सामान्यत: यह माना जाता है सर्वप्रथम कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर ने १२ अप्रैल १९१९ को गाँधीजी को एक पत्र लिखा था जिसमें उन्होंने उन्हें 'महात्मा' का सम्बोधन दिया था। किन्तु ज्ञात स्त्रोतों से पता चलता है कि इससे भी पहले २१ जनवरी १९१५ को गाँधीजी जब देश भ्रमण पर थे, तो गुजरात के जेतपुर में देवचंदभाई पारेख ने उन्हें एक मानपत्र भेंट किया था जिसमें उन्हें 'श्रीमान महात्मा मोहनदास करमचंद गाँधी' कहकर संबोधित किया गया है। उक्त अवसर पर महात्मा गाँधी के साथ कस्तूरबा गाँधी भी उपस्थित थीं।

अत: इस आधार पर देवचंद भाई पारेख के मानपत्र को गाँधीजी के लिये 'महात्मा' शब्द से पहली बार सम्बोधित किये जाने का आधार माना जा सकता है। उक्त मानपत्र और उस अवसर पर ली गई तस्वीर यहाँ दी जा रही है।

उल्लेखनीय है कि गाँधीजी कभी भी 'राष्ट्रपिता' या 'महात्मा' कहलाये जाने के पक्षधर नहीं थे। उन्होंने कई स्थलों पर अपने को इन पदवियों को दिये जाने के अयोग्य माना है। वे लिखते हैं–

'मैं सोचता हूँ कि वर्तमान जीवन से 'महात्मा' शब्द निकाल दिया जाना चाहिए। यह इतना पवित्र शब्द है कि इसे यूं ही किसी के साथ जोड़ देना उचित नहीं है। मेरे जैसे आदमी के साथ तो और भी नहीं, जो बस एक साधारण सा सत्यशोधक होने का दावा करता है, जिसे अपनी सीमाओं और अपनी त्रुटियों का एहसास है और जब-जब उससे त्रुटियाँ हो जाती हैं, तब-तब बिना हिचक उन्हें स्वीकार कर लेता है और जो नि:संकोच इस बात को मानता है कि वह किसी वैज्ञानिक की भांति, जीवन की कुछ शाश्वत सच्चाइयों के बारे में प्रयोग कर रहा है, किन्तु वैज्ञानिक होने का दावा भी वह नहीं कर सकता, क्योंकि अपनी पद्धतियों की वैज्ञानिक यथार्थता का उसके पास कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है और न ही वह अपने प्रयोगों के ऐसे प्रत्यक्ष प्रमाण दिखा सकता है जैसे कि आधुनिक विज्ञान को चाहिए।'

यंग इंडिया, १२-५-१९२० पृ. २

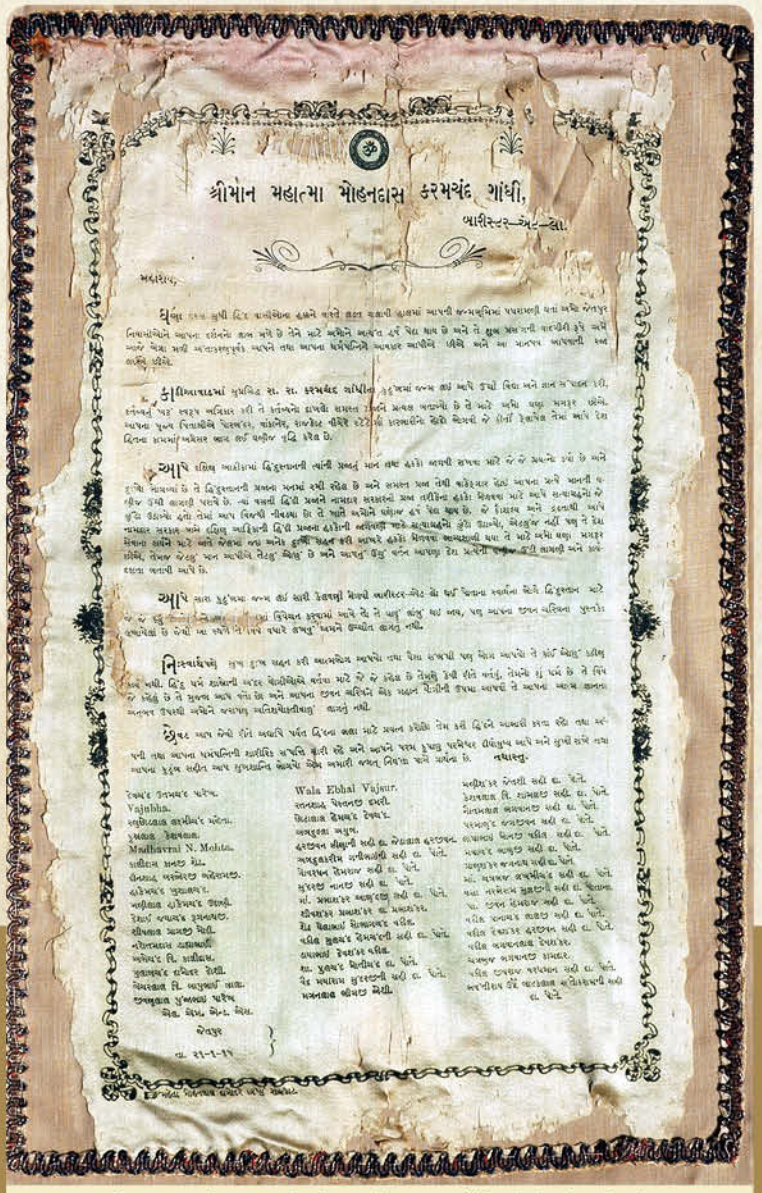

श्रीमान महात्मा मोहनदास करमचंद गांधी,

१ जनवरी १९१५ को गुजरात के जेतपुर में महात्मा गाँधी को देवचंदभाई पारेख द्वारा दिया गया मानपत्र

मानपत्र दिये जाने के अवसर पर लिया गया ग्रुप फोटोग्राफ